चन्दामामा
माँ-बच्चों का मासिक पत्र
May '55
SANKAR.

Photo by P. K. Patel
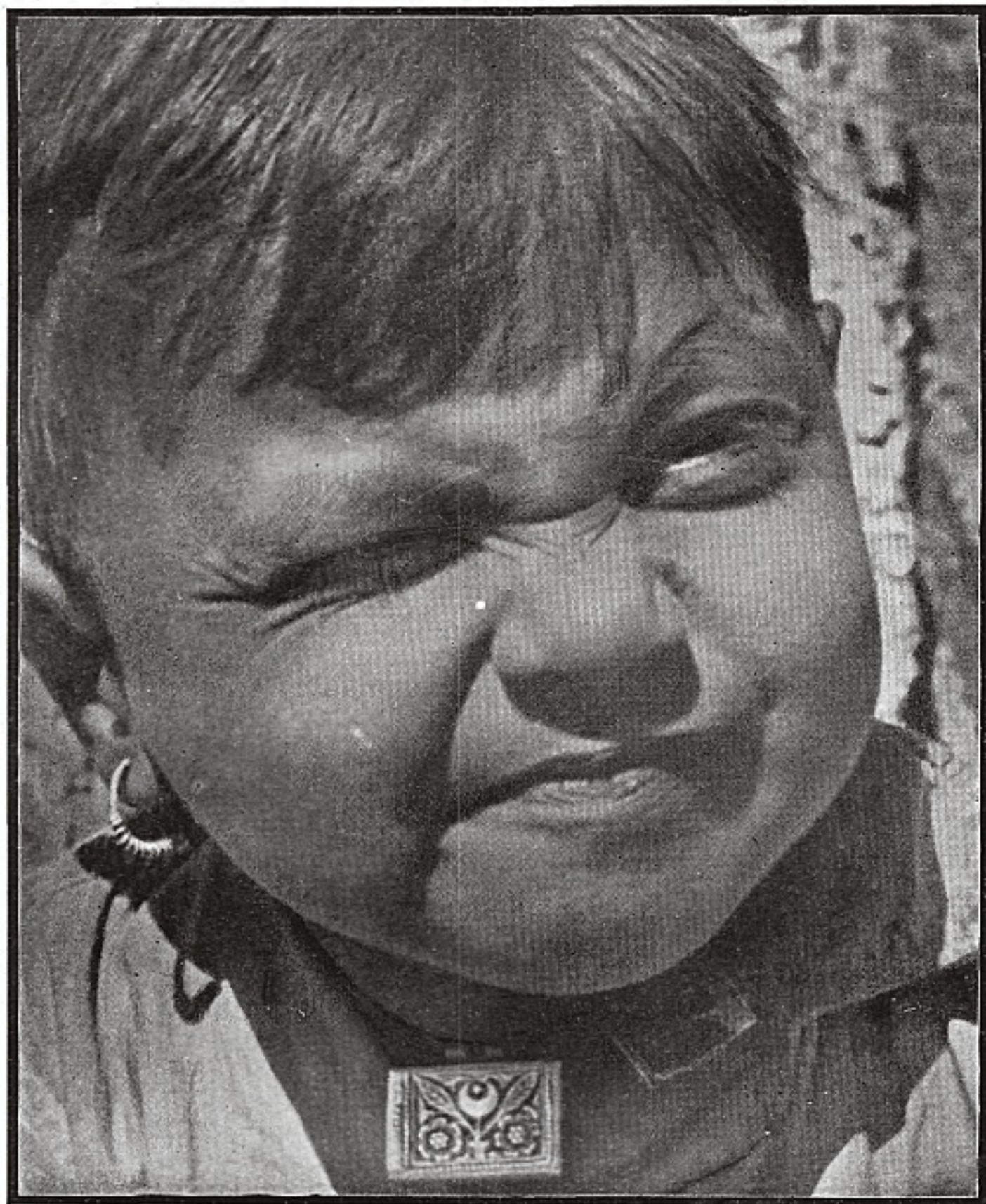
पुरस्कृत परिचयोक्ति

कहो, कैसा लगता हूँ ?

प्रेषिका
श्री. कमला, अमृतसर

फ़ाउण्टेन कलम और स्याही
के लिए संसार भर में मशहूर
नाम
पायलट्
है।
फिर से आजकल
हिन्दुस्तान की
हर जगह पर
मिलने लगी हैं
श्रेष्ठता
के लिए
गारंटी है।
PILOT INK
MANUFACTURED BY:
THE PILOT PEN CO. (INDIA) LTD.
CATHOLIC CENTRE, MADRAS-1.

Gulkand

डोंगरे का बालामृत

चन्दन और नन्दिनी

चन्दन और नन्दिनी दोनों भाई बहिन थे। एक बार वे माता पिता के साथ अपने बगीचे में घूमने गये। वे बहुत खुश थे। उन्होंने बगीचे में इधर उधर टहलते समय दीवार के पास एक नीम के पेड़ पर निम्बोली देखी। नन्दिनी ने कहा–"कैसे सुन्दर हैं ये फल? ये ज़रूर मीठे होंगे। क्या वे मीठे नहीं होंगे भैय्या?" चन्दन ने कहा–"आओ, चखकर देखें।"

जब उन्होंने निम्बोली मुख में डाली तो वे थूकने लगे। "कितनी कड़वी! कितनी गन्दी!" गुस्से में चिल्लाते हुये वे अपने पिताजी के पास गये और कहा–"वह पेड़ बहुत गन्दा है, पिताजी उसे कटवा दीजिये।" उनके गुस्से का कारण सुनकर पिता ने कहा–"तुम्हें मालूम नहीं, वह बहुत उपकारी पेड़ है। इसके फल खाये नहीं जाते, इसका रस कई औषधियों बनाने के काम में आता है, जैसे, "**नीम टूथ पेस्ट**" जिससे तुम दाँत साफ़ करते हो। इसमें नीम के कीटाणु नाशक रस के अतिरिक्त और भी कई लाभप्रद गुण हैं। 'नीम टूथ पेस्ट' के उपयोग से तुम्हारे दाँत कितने सफ़ेद हैं, अब दाँतों में कोई तकलीफ़ भी नहीं है। कलकत्ता केमिकल के "**मार्गो सोप**" के बारे में सोचो। इससे रोज़ शरीर धोने से तुम्हारा शरीर कितना साफ़ और नीरोग है। देखो "**नीम टूथ पेस्ट**" और "**मार्गो सोप**" कैसे उपकारी हैं। अब भी क्या पेड़ कटवाने के लिये कहोगे?"

"नहीं पिताजी!" चन्दन और नन्दिनी ने कहा–"हमें नहीं मालूम था कि नीम का पेड़ इतना उपयोगी है। हम नीम और नीम से बनाये हुये "**नीम टूथ पेस्ट**" और "**मार्गो सोप**" की बातें आज ही अपने दोस्तों को कहेंगे।"

बच्चों के लिये, कलकत्ता केमिकल द्वारा प्रचारित

सभी मंगल कार्योंमे
सुप्रसिद्ध सुगंधित
दसरा दर्बार
और
पुष्परंजन
अगरबत्ति उपयोग कीजीये
(REGISTERED)
DASARA
DURBAR
PUSHPARANJAN
AGARBATHY
दि माडरन इन्डिया ट्रेडिंग कंपनि बेंगलोर-२.

चन्दामामा

संचालक: चक्रपाणी

ये ग्रीष्मावकाश के दिन हैं। विद्यार्थियों की उन्नति के लिये यह आवश्यक है कि अध्ययन के साथ साथ अवकाश भी मिले।

परन्तु अवकाश का अर्थ यह नहीं है कि खेल-तमाशे में सारा समय व्यर्थ किया जाय। विद्यार्थियों को चाहिये कि इस अवकाश में देश के मुख्य-मुख्य स्थलों का पर्यटन करें, जिनके बारे में उन्होंने अपने पाठ्य पुस्तकों में पढ़ा है।

अवकाश में यह भी ज़रूरी है कि विद्यार्थी ऐसी पढ़ने लायक पुस्तकें पढ़ें, जिन्हें वे पाठ्य-पुस्तकों के रूप में नहीं पढ़ पाये हैं। ज्ञान-वृद्धि का अच्छा मौका जानकर ग्रीष्मावकाश का पूरा उपयोग करना चाहिये।

वर्ष : 6 मई 1955 अङ्क : 9

शेर की आवाज़ !

अनन्तपुर में अनन्त नामक,
रहता था इक भला किसान;
बोये उसने ईख खेत में,
जो बढ़कर हो गये ज़वान!

फ़सल बहुत अच्छी थी अब की,
पौधे सुख से झूम रहे थे;
सुन्दर, कोमल, रुचिर-स्वाद में,
मीठे रस से सभी भरे थे।

लेकिन आने लगीं खेत में,
चोरी-चोरी चतुर लोमड़ियाँ;

तोड़-तोड़ ताज़े ईखों को,
रस से भरती उदर लोमड़ियाँ।

लोमड़ियों से बचने का तब,
सूझा एक उपाय अनन्त को;
सिंहचर्म से मढ़ा घड़ा इक,
रक्खा उसने, बुला पुत्र को!

सिंहचर्म को खूब रगड़ते,
पिता-पुत्र दोनों हर रात;
गरज रहा हो सिंह पास ही—
ऐसी करते थे आवाज़।

क्रुद्ध सिंह-सा सुनकर गर्जन,
लोमड़ियों के काँपे प्राण;
फिर तो आना भूल खेत में,
भागीं अपनी लेकर जान!

* * *

और कहीं से सुना पुत्र ने,
सोचा उसने पिता वहाँ हैं!

धोखा यों जब हुआ खेत में,
दो में से कोई न आया;
इधर अभय हो लोमड़ियों ने,
सभी ईख को तोड़ गिराया।

विजय-गर्व में सभी फूलतीं,
चली गयीं, जब हुआ सबेरा;
पिता-पुत्र जब आये तब तो,
छाया आँखों में अंधेरा!!

एक रात चुपके से आई,
एक लोमड़ी उसी खेत में;
कैसा है यह शेर गरजता?—
यही देखने छिपी खेत में।

देखा उसने सिंहचर्म को,
रगड़ रहा है खूब किसान;
शब्द निकलता इसी सबब से,
रह-रहकर है सिंह समान।

हँसी लोमड़ी देख देख यह,
अपने दल को शीघ्र बुलाया;
सिंहचर्म को उसने भी तब,
पैरों से ही रगड़ बजाया।

सुन आवाज़ पिता ने सोचा—
पुत्र खेत में बजा रहा है;

मुख - चित्र

जब अर्जुन, जो अस्त्र-शस्त्र लेने के लिये गया हुआ था, बहुत देर तक न आया तो युधिष्ठिर चिन्तित होने लगा। तब बृहदश्व नाम के ऋषि ने आकर युधिष्ठिर के चिन्ता-निवारण के लिये निम्न कहानी सुनाई—

निषध देश का राजा नल था। वह बहुत सदाचारी था। विदर्भ की राजकुमारी दमयन्ती ने स्वयंवर में उसको वर चुना। नल के सदाचार को देखकर कलि को ईर्ष्या हुई। जब एक बार नल धर्म के मार्ग से थोड़ा हटा तो कलि ने उसको झट पकड़ लिया।

कलि के प्रोत्साहन से नल ने पुष्कर के साथ जुआ खेल सारा राज्य खो दिया, और दमयन्ती के साथ जङ्गलों में चला गया। वहाँ वह भूख की बाधा न सह सका। उसने चिड़ियों को पकड़ने के लिये अपना कपड़ा फैलाया; पर चिड़ियाँ कपड़ा लेकर उड़ गईं! वे दोनों हर तरह के कष्ट झेलते-झेलते एक दिन थके-माँदे एक पेड़ के नीचे सो गये। नल ने दमयन्ती को सोता देख, उसकी साड़ी फाड़कर स्वयं पहिन ली, और पत्नी को छोड़कर चला गया।

नल के कुछ दूर जाने पर उसे एक काला साँप दावानल में फँसा हुआ दिखाई दिया। वह कराह रहा था—"महाराज! मुझे इस आफ़त से बचा, मैं तेरा भला करूँगा!" नल ने उसकी रक्षा की; परन्तु आग से निकलते ही उसने नल को अपने चंगुल में लपेट लिया। परिणामतः नल बदसूरत हो गया।

"मैं कर्कोटक नाम का सर्पराज हूँ। तुझे मालूम हो जायेगा कि कुरूपता से तेरा ही फ़ायदा होगा। जब ज़रूरत पड़े तो मुझे याद कर लेना। मैं फिर तुझे तेरा रूप दे दूँगा!"—यह कह वह साँप अदृश्य हो गया।

बाद में नल 'सुबाहु' नाम रखकर ऋतुपर्ण नाम के राजा के यहाँ अश्वपालक के रूप में काम करने लगा। दमयन्ती 'चेदी' रानी के पास 'सैरंध्रि' नाम रखकर रहने लगी। थोड़े समय बाद दमयन्ती के पिता ने उसके दूसरे स्वयंवर की घोषणा की। आखिर नल ने फिर दमयन्ती से विवाह कर लिया। और वे दोनों सुख से रहने लगे।

किस्मत की बात

एक गाँव में दो भाई रहा करते थे। बड़ा भाई रईस जमींदार था और छोटा गरीब काश्तकार। एक बार छोटे भाई को खेत में खाद ले जानी थी। इसलिये उसने भाई के पास जाकर बैल-गाड़ी माँगी। भाई देने को मान गया, बशर्ते कि वह बैलों को खूब खिलाये-पिलाये और शाम होने से पहिले उन्हें घर वापिस ले आये। छोटा भाई अपना काम खतम कर गाड़ी को जल्दी वापिस ले जा रहा था कि उसकी लापरवाही की वजह से, एक बैल का सींग दीवार से टकरा लगभग जड़ से टूट गया।

बड़े भाई को गुस्सा आया। उसने छोटे भाई पर मुकद्दमा चलाने की ठानी। पंचायतदार किसी और गाँव में था। वे दोनों झट उस गाँव के लिये रवाना हुये। गाँव के मुखिया के घर रात काटी। मुखिया ने बड़े भाई की तो खूब आवभगत की, पर छोटे भाई को पूछा तक नहीं। छोटा भाई बैठक में एक बेन्च पर लेटा हुआ था। थके हुये होने की वजह से वह जल्द ऊँघने लगा। नींद में, वह बेन्च पर से लुढ़क कर नीचे जा गिरा। नीचे चटाई पर मुखिया का एक वर्ष का पोता सो रहा था। छोटे भाई के गिरने से उस लड़के का पैर टूट गया। वैद्य ने आकर बताया कि वह जिन्दगी भर लंगड़ा ही रहेगा।

मुखिया को बड़ा गुस्सा आया। उसने भी छोटे भाई पर दावा करने की ठानी। वह भी पंचायतदार के पास चला।

पंचायतदार के घर का रास्ता एक नहर के ऊँचे पुल पर से गुज़रता था। मुखिया, बड़ा भाई और उसका भाई, ज्योंही पुल पर आये, तो छोटे भाई को आत्म-हत्या

श्री जगदीश प्रसाद सिगल

उस आदमी के लड़के ने, छोटे भाई को खरी-खोटी सुनाई, और वह भी उसके विरुद्ध फ़रियाद करने औरों के साथ चल पड़ा।

छोटे भाई का दिल जलने लगा। वह जो भी करता, वह कसूर हो जाता। आखिर करे क्या?

"ये कसूर मैंने अनजाने किये हैं। इस बार जान-बूझकर करूँगा। अगर मेरे विरुद्ध पंचायतदार ने निर्णय किया तो मैं उसका सिर फोड़ दूँगा।" यह सोचकर छोटे भाई ने रास्ते में पड़े एक ईंट के टुकड़े को लेकर अपने तौलिये में बाँध लिया। वह भी औरों के साथ पंचायतदार के पास चलता गया।
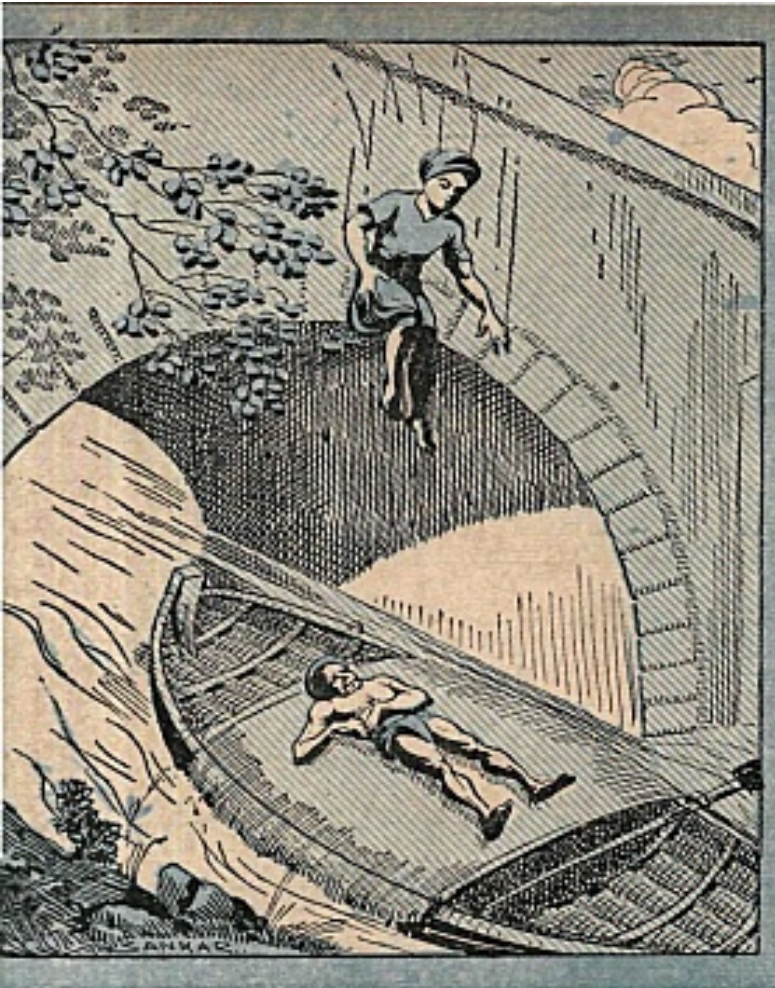
करने की सूझी। जो कुछ उसने किया था, वे कसूर ही तो थे? भला पंचायतदार भी क्या और कह सकेगा?

"यूँ तो गरीबी की जिन्दगी है। फिर तिसपर जेल की आफ़त भी क्यों?"

यह सोचकर छोटा भाई पुल पर से नहर में कूदा। परन्तु उसी समय पुल के नीचे से एक नाव गुज़र रही थी। उस नाव की छत पर एक आदमी सो रहा था। छोटा भाई उस पर जा गिरा और उस आदमी की तुरंत मृत्यु हो गई।

पहिले पहिल बड़े भाई ने छोटे भाई पर आरोप लगाया। उसने कहा कि उसने उसकी गाड़ी ले जाकर इस्तेमाल ही नहीं की, बल्कि जान-बूझकर उसके बैल के सींग भी तोड़ दिये। उसी समय छोटे भाई ने तौलिये में बंधी ईंट की पोटली ऊपर उठाकर पंचायतदार को दिखायी।

पंचायतदार ने सोचा कि मुज़रिम उसको सौ रुपये की घूँस देने का इशारा कर रहा है। उसने यों फ़ैसला दिया—

"क्योंकि इसने तेरे बैल के सींग तोड़ दिये हैं, इसलिये बैल के सींग बड़े होने तक, अपने खर्च पर, बैलों को यह अपने पास रखे।"

दूसरा दावा गाँव के मुखिया का था। उसकी शिकायत थी कि मुज़रिम ने बेन्च पर से गिरकर उसके पोते की टाँग हमेशा के लिये तोड़ दी है।

इस बार भी छोटे भाई ने ईंट की पोटली दिखाकर पंचायतदार को डराया। पंचायतदार ने सोचा—इस बार भी सौ रुपये की रक़म धूँप में मिल रही है, उसने यों अपना निर्णय दिया—

"क्योंकि आपके पोते की टाँग हमेशा के लिये मुज़रिम ने तोड़ दी है, इसलिये मुज़रिम अपने एक वर्ष के लड़के को आपको दे, और वह आपके लंगड़े पोते को ले। अगर मुज़रिम के एक साल का कोई लड़का नहीं है, आप तब तक इन्तज़ार कीजिये, जबतक उसके एक लड़का न हो जाय।"

तीसरी फ़रियाद नाव के मुसाफ़िर के लड़के की थी। मुज़रिम के पुल पर से नाव की छत पर कूदने के कारण, वहाँ सोये हुये फ़रियादी के पिता की मौत हो गई थी। इसलिये मुज़रिम को मुनासिब सज़ा मिलनी चाहिये।
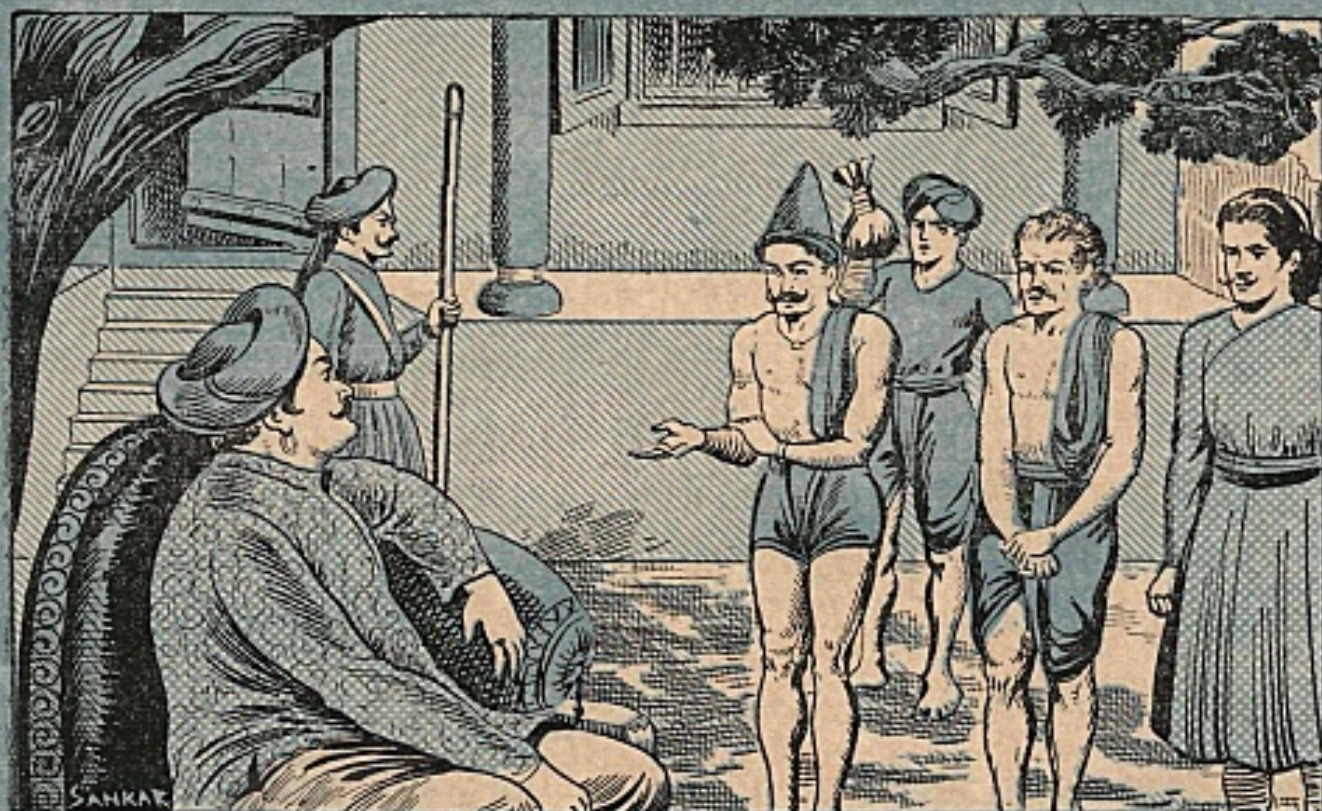
तीसरी बार छोटे भाई ने फिर अपनी पोटली पंचायतदार को दिखाई। पंचायतदार ने सोचा कि एक सौ रुपये उसके हाथ लग रहे हैं। उसने बड़े खुश होकर यह फ़ैसला दिया—

"मुज़रिम नाव पर सफ़र करे, और नाव के ठीक पुल के नीचे आने पर फ़रियादी पुल पर से मुज़रिम पर कूदे।"

मुकद्मे खतम हुये। छोटे भाई ने सोचा कि आफ़त टली। वह खुशी खुशी बाहर आ रहा था कि पंचायतदार के नौकर ने उसके पास आकर कहा—

"बाबूजी ने आपसे तुरंत तीन सौ रुपये ले आने के लिये कहा है।"—

"तीन सौ रुपये क्या बला है?"—छोटे भाई ने पूछा।

"तीन मुकद्मों के लिये तीन सौ रुपया घूँस देने के लिये, सुना है, आपने अपनी पोटली दिखाई थी।"—नौकर ने पूछा।

यह सुनते ही छोटा भाई आग बबूला हो उठा। "अच्छा, तो देख! इस पोटली में पैसा नहीं है, पर ईंट है। अगर तेरा मालिक मेरे बर्खिलाफ़ फैसला देता, तो मैं उसका खोपड़ा फोड़ देता; भले ही बाद में मुझे भुगतना पड़ता। मैंने उसी का इशारा किया था। जा, यह बता दे, अपने मालिक से।"—उसने रौब से कहा।

जब पंचायतदार ने नौकर की बात सुनी, तो उसने सोचा—"अरे, बापरे बाप! जान तो बची। अच्छा हुआ, उसके विरुद्ध निर्णय न दिया। भाग्य अच्छे थे।"

छोटे भाई के अदालत के अहाते से बाहर आते ही, बड़े भाई ने उसके हाथ पकड़कर मनाते हुये कहा—"जाने दो, जो कुछ हुआ, सो हुआ। अगर तूने मेरा

बैल छोड़ दिया, तो मैं तुझे सौ रुपये दूँगा। बहुत कीमती बैल हैं।"

छोटे भाई ने कुछ न कहा। भाई की दी हुई रुपयों की थैली को, बिना खोले ही, उसने अपनी धोती में बाँध लिया।

थोड़ी दूर जाने के बाद गाँव के मुखिया ने छोटे भाई के पास जाकर कहा—"देख भाई! लंगड़ा हो या लूला, मेरे पोते को मेरे पास ही पलने दे। मैं तेरे घर चार गाड़ी अच्छा अनाज़ भिजवा दूँगा। और ले यह भी रख। अगर हमारे गाँव आकर, हमारे घर में दो-चार दिन न ठहरे, तो कहे देता हूँ कि अच्छा न होगा!"—उसने भी छोटे भाई के हाथ में एक थैली थमा दी।

छोटे भाई ने मुखिया के हाथ से थैली ले ली, और कहा कि मौका मिलने पर वह ज़रूर उसके घर दो-चार दिन ठहरेगा।

उसके बाद नाव का मुसाफ़िर उसके पास आया।

"महाराज! देखिये। मैं तो पहिले से ही शिकायत नहीं करना चाहता था, पर रिश्तेदारों ने मेरी एक न सुनी। फिर क्या आपने जान-बूझकर मेरे पिता को मारा है? आप मुझे छोड़ दीजिये। जो कुछ मुझसे बन सका, मैं आपको दे रहा हूँ।" यह कहते हुये उसने एक भारी थैली दी और राम राम करके चला गया।

इतने दिनों बाद छोटे भाई की गरीबी दूर हुई। वह यह सोचता हुआ कि कभी कभी बदी भी नेकी के लिये आया करती है, अपने घर गया।

उसने तब एक बैल का जोड़ा खरीदा और थोड़ी बहुत ज़मीन भी खरीदी।

तब से वह खेती करता आराम से रहने लगा।

स्वावलम्बन

मुसलमानों के प्रसिद्ध तीर्थस्थल—मक्का शहर में, एक बार खुदा के फ़रिश्ता मोहम्मद सड़क पर चले जा रहे थे। एक भिखारी उनके पास आकर गिड़गिड़ाने लगा—“ गरीब को ख़ैरात दीजिये। खुदा आपका भला करेगा।”

मोहम्मद ने उस भिखारी को ऊपर से नीचे तक देखा। वह कोई खास बूढ़ा न था। हाथ में एक मिट्टी का खप्पर था। मैली-कुचैली, चीथड़े हुई लोई से तन ढाँपे हुये था। उसकी शक्ल पर लाचारी थी।

“ क्या तू इतना गरीब है कि तुझे भीख माँगने की नौबत आ गई ? ”—मोहम्मद ने पूछा।

“ महाराज ! इस दुनियाँ में अगर मेरी कोई चीज़ है, तो बस ये लोई और खप्पर ही हैं।”—भिखारी ने बताया।

“ अच्छा, तो उन्हें मुझे दे दे।”—मोहम्मद ने कहा।

भिखारी मोहम्मद का मतलब समझ न पाया। उसने अपनी लोई और खप्पर उनको दे दी। तुरंत मोहम्मद ने किसी राहगीर के हाथ उन्हें बेच दिया।

यूँ तो उनकी कीमत कुछ न थी। पर चूँकि बेचनेवाले खुद मोहम्मद थे, इसलिये उनके लिये अच्छे दाम मिल गये।

यह देख भिखारी छटपटाने लगा—“ हुज़ूर ! जो कुछ मेरे पास था, वह भी आपने बेच डाला। अगर लोई न हो, तो आज रात को मैं क्या ओढ़ूँगा ? खप्पर के बगैर किस में मैं खाना खाऊँ ? ”

मोहम्मद ने यों जवाब दिया—

“ बेटा ! वे तेरी चीज़ें नहीं हैं, बल्कि वे तेरी बुरी हालत की जड़ हैं। जब तक

श्री अब्दुल रहीम

वे तेरे पास हैं, तब तक तुम में इन्सानियत नहीं है। जा, यह पैसा ले जा, और बाज़ार में जाकर एक कुल्हाड़ी खरीद ले। कुल्हाड़ी ले जाकर जङ्गल में लकड़ियाँ काट। उनको बाज़ार में लाकर बेच। और जो कुछ मिले, उससे भूख मिटा और कपड़े, खरीद। शुरू शुरू में तुझे मेहनत की जिन्दगी बुरी लगेगी। मगर काम न छोड़ना। मुझे दो सप्ताह बाद फिर मिलना।"

और कोई रास्ता न था, इसलिये भिखारी ने वही किया, जो फ़रिश्ते ने बताया था। उसने एक कुल्हाड़ी खरीदी। और जङ्गल में जाकर, लकड़ियाँ काट लेता और उन्हें बेचकर अपनी रोज़ी बनाता।

दो सप्ताह बीत गये। वह आदमी फिर फरिश्ते को देखने आया। मोहम्मद उसे पहिचान न पाये; क्योंकि उस आदमी की शक्ल पर पुरानी लाचारी न थी। बदन हट्टाकट्टा हो गया था। चाल में भी चुस्ती थी।

"हुज़ूर! आपने मुझे नई जिन्दगी बख्शी है। बिना किसी के सामने हाथ पसारे, मैं खुद अब अपना पेट पाल लेता हूँ। अब मैं किसी एक और की परवरिश भी कर लेता हूँ। मेरी सेहत भी अच्छी है।"

"हाथ जोड़कर उस रहमदिल अल्लाह की दुआ माँग। तूने अपनी जिन्दगी ही न सुधारी, बल्कि मुल्क की भी भलाई की। यह एक पाक जगह है। दुनियाँ के चारों कोनों से यहाँ हज़ारों लोग आते हैं। वे अपने अपने मुल्क को वापिस जाकर कहते हैं कि तेरे मुल्क में बेशर्म भिखारी हैं। क्या यह शर्म की बात नहीं है? मेहनत की जिन्दगी से बढ़कर कोई अच्छी जिन्दगी नहीं है।"—मोहम्मद ने उसे समझाया।

सूर्य से शर्त

जब ब्रह्मदत्त काशी का परिपालन कर रहा था, तब चित्रकूट प्रान्त में नब्बे हज़ार हँस रहा करते थे। उस समय बोधिसत्व हँस के रूप में पैदा हुये। क्योंकि वह हँस सुगुण सम्पन्न और सब से अधिक वेगवान था, इसलिये वह नब्बे हज़ार हँसों का मुखिया बन गया। और उस मुखिया का नाम था "राजहँस"।

एक बार राजहँस को अपने झुण्ड के साथ सरोवर में विहार कर घर वापिस जाते समय काशी राज्य पर भी मँडराने का मौका मिला। हँसों के झुण्ड को देखकर लगता था, मानों काशी राज्य को चारों ओर से सोने और चान्दी से मढ़ दिया गया हो। काशीराज ने भी आश्चर्य से देखा। राजहँस ने तो उसका मन और भी आकर्षित किया।

काशीराज जान गया कि राज हँस में राजोचित तेज़ व अभिमान था, अच्छे अच्छे फूल, पूजा-सामग्री मँगाकर, उसने राजहँस का स्वागत किया। राजहँस ने भी उसका सम्मानपूर्ण स्वागत सस्नेह स्वीकृत किया। वह अपने झुण्ड के साथ, काशीराज का आतिथ्य स्वीकार कर कुछ दिनों तक वहाँ रहा, फिर घर वापिस चला गया।

तब से काशी राज की राजहँस के प्रति ममता दिन प्रति दिन बढ़ती गई। अब उसका मन हमेशा राजहँस पर रहने लगा। रात दिन उसी के बारे में सोचता रहता। कब, और कहाँ से वह राजहँस आयेगा, यह वह चौकन्ना हो, हज़ार आँखों से निरन्तर देखता रहता।

एक बार चित्रकूट प्रान्त में दो छोटे छोटे हँसों ने राजहँस से कहा—"हमें सूर्य

से शर्त लगाने की मर्ज़ी हो रही है।" उन्होंने साफ़ अपने मन की बात कह दी।

यह सुन राजहँस ने उन्हें समझाया—"अरे बच्चो! सूर्य कहाँ और तुम कहाँ? उससे भला शर्त क्या लगाना? मूर्खता है! सूर्य कितना वेगवान है, यह तुम नहीं जानते। इसलिये ही तुम्हें भ्रम हो गया है। तुम उसके साथ नहीं भाग सकोगे। फिर सम्भव है कि तुम्हारी जान पर खतरा ही आ पड़े। इसलिये तुम दोनों ज़िद न करो। पागलपन छोड़ दो!"

उन हँसों को राजहँस का यह उपदेश पसन्द न आया। उन्होंने फिर एक बार जाकर राजहँस की अनुमति माँगी। इस बार भी राजहँस ने वही कहा। मगर फिर भी वे हँस बाज़ न आये। उन्होंने तीसरी बार जाकर पूछा। इस बार भी राजहँस न माना।

इस तरह काम न चलेगा, यह सोचकर वे दोनों नादान छोटे हँस, राजहँस को बिना बताये युगन्धर पर्वत के शिखर पर उड़ गये। यह शिखिर इतना ऊँचा था, मानों वह साक्षात् सूर्य को ही छू रहा हो। इसलिये उस शिखिर पर से सूर्य
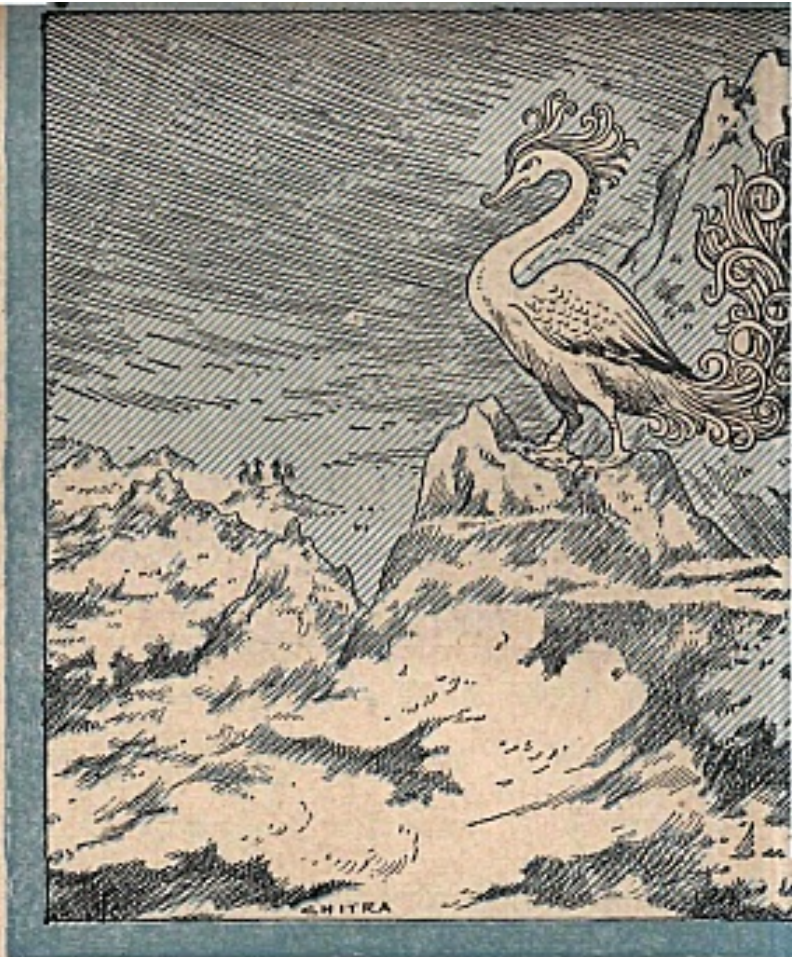
के साथ दौड़ लगाने का उन हँसों का इरादा था।

जब यथा नियम राजहँस ने अपने झुण्ड की गिनती की, तो उसने देखा कि दो हँस कम हैं। उसे बड़ा अफ़सोस हुआ। अफ़सोस करने से क्या फ़ायदा?" उसने सोचा—कुछ भी हो, उनकी मदद करनी चाहिये।

तुरंत वह भी युगन्धर पहाड़ की चोटी पर पहुँचा, और बिना उन हँसों के जाने, एक जगह जाकर बैठ गया। सूर्योदय होते ही वे दोनों हँस के बच्चे सूर्य के

साथ उड़ने लगे। राजहँस भी उनके पीछे पीछे उड़ने लगा।

उन दोनों बच्चों में से छोटा हँस दोपहर तक उड़ता रहा। फिर उसके पँखों में गरमी पैदा हो गई, वह बुरी तरह थक गया। जब वह गिरने को था, तो उसने राजहँस को देखकर हाँफते हाँफते कहा—"राजा! यह मेरे बस की बात नहीं है। मैं हार गया हूँ।" तब राजहँस ने ढाँढ़स बँधाया—"खैर, कोई बात नहीं, मैं तो हूँ न?" उसको समझा-बुझाकर, अपने पँखों पर चढ़ाकर अपने झुण्ड के पास वह छोड़ आया।

फिर थोड़ी देर बाद दूसरे हँस को लगा जैसे उसके पँखों में कोई सूई चुभा रहा हो। वह भी थक गया। वह भी राजहँस को देखकर गिड़गिड़ाया। उसको भी राजहँस ने आश्वासन दिया और अपने पँखों पर चढ़ाकर चित्रकूट पहुँचा दिया।

इस तरह अपने झुण्ड को दो हंसों का शर्त हार जाना राजहँस को गँवारा न था। उसने खुद शर्त लगाने की ठानी। वह अभी उड़ा ही था कि कुछ ही देर में सूर्य के पास पहुँच गया। देखते देखते वह सूर्य से भी आगे बढ़ गया। वह तो यह देखना
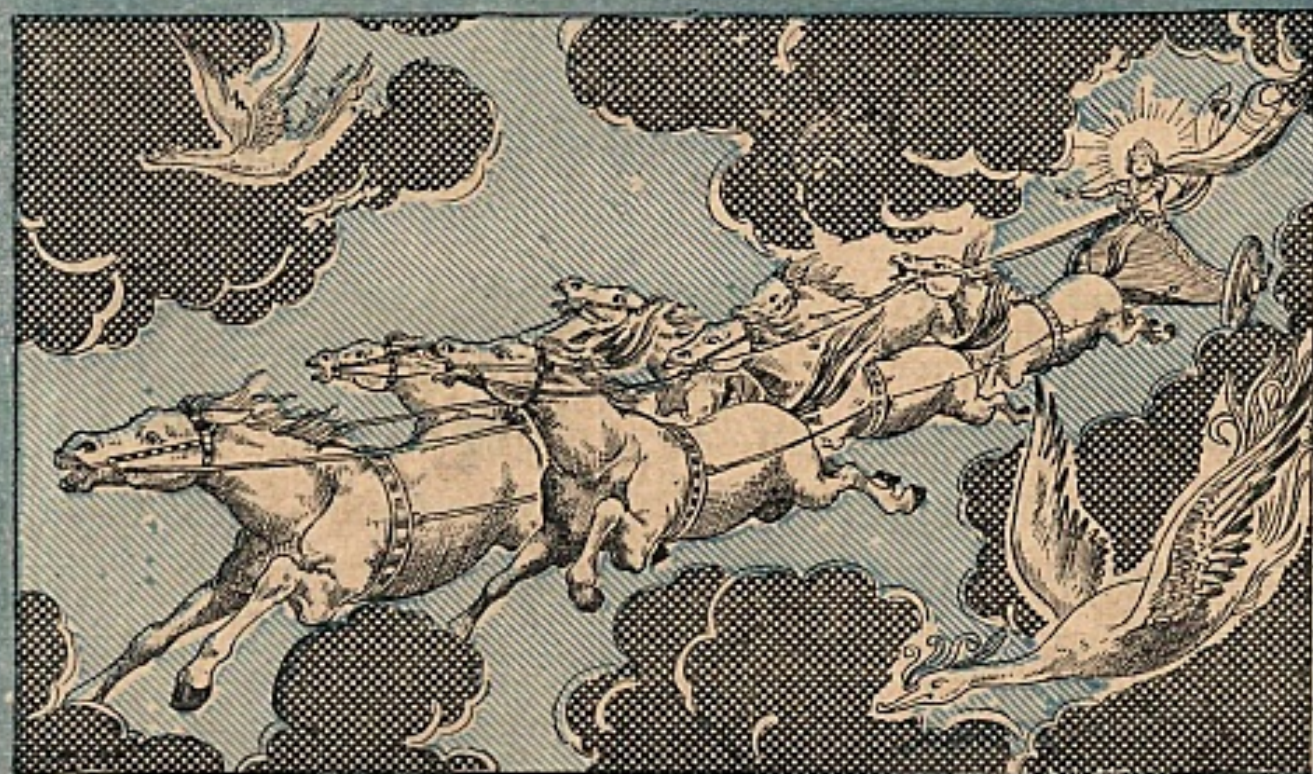
चाहता था कि सूर्य में कितनी शक्ति है। नहीं तो भला उसको शर्त की क्या ज़रूरत!

इसलिये वह थोड़ी देर इधर उधर उड़ता रहा, फिर आराम के लिये भूमि पर उतरकर काशी राज्य पहुँच गया। काशी राजा तो उसकी बाट जोह ही रहे थे, उसको देखते ही वे निहाल हो गये।

उसने राजहँस को अपने सुवर्ण सिंहासन पर बिठाया। सोने की थाली में खीर, और सोने के कलश में शरबत रखकर उसके सामने परोसा। थकान जब ज़रा कम हुई तो राजा ने उससे हाल-चाल पूछना शुरू किया। राजहँस ने सारी बात एक सिरे से दूसरे सिरे तक कह सुनाई।

सब कुछ सुनकर काशीराजा ने कहा—"पक्षीराज। सूर्य से ही आपने शर्त जीती। आपकी शक्ति को देखने के लिये मैं भी बहुत उत्सुक हो रहा हूँ।" राजहँस ने भी अपनी शक्ति दिखाने के उद्देश्य से उससे कहा—"राजा! अगर तेरे राज्य में विद्युत के समान बाण छोड़नेवाले तीरन्दाज़ हो तो उनमें से चार को यहाँ बुला।"—राजा ने उन्हें बुला भेजा।

बागीचे में एक चौकोर स्तम्भ था। चार तीरन्दाज़ उस स्तम्भ के चारों ओर धनुष-बाण लेकर खड़े कर दिये गये। यह राजहँस की आज्ञा थी।

बाद में राजहँस अपने गले में एक घंटी बाँध स्तम्भ पर जाकर बैठा गया।

"मेरे इशारा करते ही तुम चारों बाण छोड़ देना। मैं उड़कर तुम चारों के अलग अलग बाण तुम्हारे सामने लाकर रख दूँगा। परन्तु मेरे गले में बँधी घंटी का शब्द सुनते ही तुम मेरी गति जान सकोगे, अन्यथा मुझे आँखों से देख लेना सम्भव नहीं है।"—राजहँस ने कहा। अपने कहे के अनुसार, तीरन्दाज़ों का

बाण छोड़ना था कि उसने उन्हें उड़कर पकड़ लिया और उनके सामने रख दिया। बाण अपने निशाने तक पहुँच भी न पाये।

राजा और उसके दरबारी आश्चर्य से हक्केबक्के रह गये। "राजा! देखा तुमने? मैं कितनी तेज़ी से उड़ता हूँ। अलावा इसके, यह तो तब की बात है, जबकि मैं बहुत धीमे उड़ा था। इसको देखकर क्या आप अनुमान कर सकते हैं कि मेरी अपनी गति वाकई कितनी तेज़ होगी?

हड़बड़ाते हुये राजा ने कहा—"आपकी चाल कितनी तेज़ है, यह तो हमने स्वयं देख लिया है। क्या संसार में कोई ऐसा भी है, जिसकी चाल आप से अधिक तेज़ हो?"

तब राजहँस ने कहा—"चाहे मैं कितनी तेज़ी से भी उड़ूँ, पर एक ऐसी महाशक्ति है, जो मुझसे भी हज़ारों गुना अधिक तेज़ भागती है। वह है, "काल"। यह काल-सर्प, प्रति क्षण, इस संसार के जीवों का, प्रचण्ड वेग से नाश कर रहा है।" राजहँस का यह कहना था कि काशी राजा डर के मारे थर थर काँपने लगा।

तब राजहँस का रूप धरे हुये बोधिसत्व ने राजा को इस प्रका उपदेश दिया—

"राजा! उनको डरने की ज़रूरत नहीं, जो यह जानते हैं कि काल-सर्प नाम की कोई चीज़ है। जब तक तू धर्म और नीति के मार्ग पर चलते हुये राज्य का परिपालन करता है, तबतक तुझे कोई डर नहीं होना चाहिये। इसलिये तू अपना कर्तव्य भलीभांति निभा।"

बोधिसत्व के उपदेश के अनुसार राज्य का परिपालन कर काशी राजा ने यश प्राप्त किया।
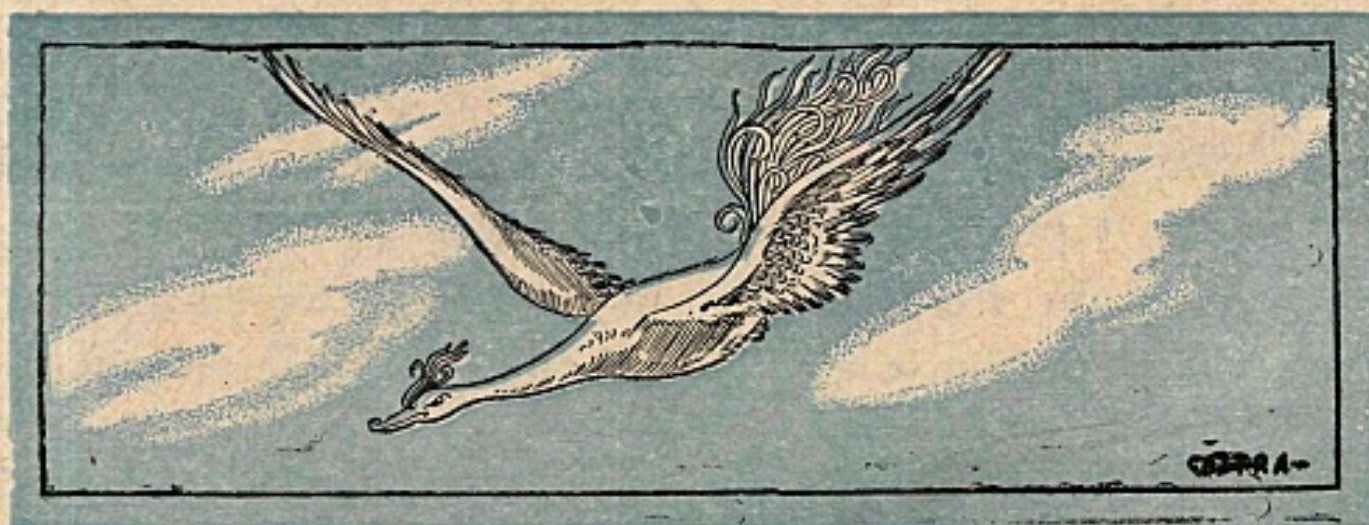
[१६]

[व्याघ्रदत्त की नज़र बचाकर, समरसेन भाग निकला, और एक नगर के खँडहर में छुप गया था। वहाँ व्याघ्रदत्त अपने सैनिकों के साथ आया। यह मालूम हो गया था कि शाक्तेय का अपूर्व शक्तिवाला त्रिशूल हाथियों के जङ्गल में, गुरु-द्रोही के अस्थि-पंजर में है। व्याघ्रदत्त को यह पता लग गया कि कहाँ समरसेन छुपा हुआ है। अब आगे पढ़िये।]

व्याघ्रदत्त जान गया कि कहाँ समरसेन और उसके सैनिक छुपे हुये थे। पर उसको यह सन्देह हुआ कि खंडहर के खम्भों के पीछे छुपे लोग शिवदत्त व उसके अनुचर भी हो सकते हैं। जो कोई भी हो, व्याघ्रदत्त ने सोचा—उनको पकड़ लेना ही अच्छा है।

समरसेन भी आनेवाले खतरे के बारे में खबरदार हो गया। उसने निश्चय कर लिया था कि अपने छे सैनिकों के साथ व्याघ्रदत्त का मुक़ाबला करना आत्म-हत्या के बराबर है। उस हालत में उसके लिये जल्द से जल्द वहाँ से कहीं और भाग जाना ही उचित था।

व्याघ्रदत्त के सैनिक ज़ोर से चिल्लाते हुये उस खंडहर की ओर लपके, जहाँ समरसेन छुपा हुआ था। समरसेन भी अपनी तरफ़ सैनिकों को आते देखकर वहाँ से जल्दी जल्दी भागने लगा।

छः सैनिक और समरसेन एक तरफ़ थे और दूसरी तरफ़ बीस सैनिक और उनका सरदार व्याघ्रदत्त थे। उनके शोर-शरावे से आसपास का सारा इलाका गूँज रहा था। तहलका मचा हुआ था।

खंडहर के कमरों में से, खम्भों के पीछे से, दीवारों की आड़ में से समरसेन और उसके सैनिकों ने भागना चाहा। परंतु व्याघ्रदत्त ने अपने सैनिकों को दो टोलियों में बाँटकर उनको घेर लेने का प्रयत्न किया।

खम्भों के पीछे से, दीवार लांघकर जो व्याघ्रदत्त के सैनिक आगे आ गये थे, समरसेन और उसके सैनिक उनका मुकाबला करने लगे। समरसेन ने सोचा—"जब तक व्याघ्रदत्त के पांच-छः सैनिक न मारे जायँ, उनके लिये वहाँ से भाग जाना असंभव था।"

व्याघ्रदत्त ने अपने सैनिकों का हौसला बढ़ाया और स्वयं समरसेन से लड़ने के लिये आगे बढ़ा। तबतक व्याघ्रदत्त के चार-पाँच सैनिक समरसेन की तलवार के शिकार हो चुके थे।

चाहे जिधर भी देखो, चारों ओर जख्मी सिपाही पड़े हुये थे, और हाय हाय कर रहे थे। वह सारा स्थान भयंकर लग रहा था। ऐसी हालत में व्याघ्रदत्त ने आगे कूदकर समरसेन पर हमला किया।

दोनों बलवान और साहसी थे। उन दोनों में तलवार से घमासान युद्ध होने लगा। उनके पैरों की चोट से और तलवारों की प्रतिध्वनि के कारण टूटी-फूटी दीवारें हिल-हिलाकर गिरने लगीं। गिरते हुये खम्भों से और दीवारों से बचते हुये वे आपस में भयंकर युद्ध करते जाते थे।

व्याघ्रदत्त, थोड़ी देर युद्ध करने के बाद थक गया। यह देख, समरसेन

अपने सारे बल और चतुरता के साथ व्याघ्रदत्त को मारने के लिये पैंतरा लगाने लगा।

इस बीच में, व्याघ्रदत्त के सैनिक, जो संख्या में दुगने-तिगुने तो थे ही, उन्होंने समरसेन के सैनिकों को पकड़ लिया। सैनिकों में से दो-तीन बुरी तरह घायल हो गये थे। व्याघ्रदत्त के सैनिक तब अपने सरदार की मदद के लिये दौड़े। शोर न आता देख, अपनी सैनिकों की ललकार की ध्वनि न सुन, समरसेन ने अनुमान कर लिया कि या तो वे मारे गये हैं, नहीं तो पकड़े गये हैं। अब, जल्दी से जल्दी व्याघ्रदत्त का खातमा कर, वहाँ से भाग जाने की समरसेन सोचने लगा।

अतः समरसेन दुगने उत्साह और जोश से व्याघ्रदत्त पर हमला करने लगा। कहीं ऐसा न हो कि व्याघ्रदत्त के सैनिक उसको पीछे से पकड़ लें, वह दीवार के सामने खड़े हो लड़ने लगा। परंतु उसको यह न मालूम था कि दीवार कमज़ोर हो चुकी थी और गिरनेवाली थी। मगर व्याघ्रदत्त ने यह मालूम कर लिया था।

यकायक व्याघ्रदत्त के सैनिकों की कर्कश-ध्वनि सुनाई पड़ने लगी। समरसेन के

सैनिकों को पकड़ने के बाद, वे एक साथ, सरदार की मदद करने के लिये आगे बढ़ रहे थे। यह देख समरसेन ने ज़ोर से व्याघ्रदत्त पर तलवार चलाई और दीवार पर से कूद जाना चाहा।

ज्योंही समरसेन ने दीवार लांघनी चाही, दीवार तो पहिले से ही कमज़ोर थी, उसके कूदते ही वह धड़ाम से नीचे गिर गई, और समरसेन परली तरफ़ पत्थरों में जा पड़ा।

व्याघ्रदत्त को अच्छा मौका मिला। वह ललकारकर उस पर कूदा। इतने में उसके सैनिक आ गये, और उन्होंने समरसेन के हाथ-पैर जबरदस्ती पकड़ लिये। उसको हिलने न दिया।

व्याघ्रदत्त के हुकम पर समरसेन के हाथ-पैर रस्सी से बाँध दिये गये। उसकी तलवार को व्याघ्रदत्त ने ले लिया।

दुश्मन के पकड़े जाने पर व्याघ्रदत्त फूला न समाया। वह ज़ोर से हँसने लगा। उसके हँसने में निर्दयता और क्रूरता थी।

"आख़िर, कुछ भी हो, तू मेरे हाथ में आ ही गया। अगर तू पहिले पहले जब मेरे हाथ में आया था, तब मुझसे दोस्ती कर लेता तो अब तेरी यह बुरी हालत न होती। शाक्तेय का अपूर्व शक्तिवाला त्रिशूल कहाँ है, मुझे मालूम है। पर तू बुरी मौत से न बच सकेगा।"—व्याघ्रदत्त ने कहा।

व्याघ्रदत्त की बातें सुनकर समरसेन घबराया नहीं। अगर उसके लिये मृत्यु अनिवार्य थी, तो वह तैयार ही था। उसे अपनी चिन्ता न थी। वह तो मन ही मन उन सैनिकों के बारे में सोच रहा था, जो उस पर भरोसा कर हर कष्ट को झेल रहे थे। कभी कभी उसको यह भी सन्देह होता कि कहीं ऐसा तो न हुआ कि सरदार

के नाते उसने उन्हें गलत हुक्म दिया हो? वह अपनी ही परीक्षा करने लगा। इस कारण ऐसा लगता था, जैसे उसने व्याघ्रदत्त की बात सुनी ही न हो।

परन्तु व्याघ्रदत्त ने समरसेन की चुप्पी का दूसरा मतलब लिया। निश्चिन्त, निर्भय समरसेन को देखकर व्याघ्रदत्त घबराने लगा। वह सोचने लगा—"किसकी सहायता की उम्मीद में यह इतना निर्भय होकर खड़ा है?"

"इस बुरी हालत में तेरी मदद करने वाला यहाँ कोई नहीं है। यह बात तू अच्छी तरह जान ले। समझे?"—व्याघ्रदत्त ने कहा। वह सोच रहा था कि ऐसा कहने पर समरसेन उस व्यक्ति का नाम बता देगा, जो उसकी सहायता कर सकता था।

परन्तु तीक्ष्ण बुद्धिवाला समरसेन व्याघ्रदत्त की घबराहट और चिन्ता को ताड़ गया था। इसलिये उसने सोचा कि थोड़ा और उसे डरा कर देखा जाय। हो सकता है, फ़ायदा ही हो।

"तू भी यह अच्छी तरह जान ले कि शाक्तेय का त्रिशूल कहाँ रखा हुआ है, यह जानने वाला तू अकेला ही नहीं है।

सिर्फ़ जानने से कुछ फ़ायदा नहीं है।"—समरसेन ने कहा।

यह सुन व्याघ्रदत्त हकाबका रह गया। शाक्तेय का त्रिशूल, नगर के खंडहरों में हाथियोंवाले जङ्गल में है, यह शिवदत्त को मालूम था। और जब वह अपने सैनिकों को इस बारे में कह रहा था, तो समरसेन ने भी छुपकर सुन लिया होगा।

"मुझे मालूम है कि तूने आड़ में खड़े होकर यह सुन लिया है कि त्रिशूल कहाँ रखा हुआ है। शिवदत्त को भी वह जगह मालूम है। पर न तुम ही मुझे रोक सकते

हो, न वह ही। उस हालत में कौन ऐसा है, जो मुझे दिव्य-शक्तिवाले त्रिशूल को लेने से रोक सकता है?"—व्याघ्रदत्त ने पूछा।

समरसेन उस प्रश्न का बिना जवाब दिये मुस्कुराता खड़ा रहा। समरसेन चाहता था कि इस तरह व्याघ्रदत्त के मन में और भी घबराहट पैदा कर दे। समरसेन ने यह भी देखा कि व्याघ्रदत्त का मुँह पीला पड़ गया था। वह कराहने लगा था।

"दो ऐसे व्यक्ति हैं, जो तेरे हाथ में त्रिशूल जाने से रोक सकते हैं। उनमें से तू सिर्फ़ अबतक एक को ही पकड़ पाया है। पर एक ऐसा व्यक्ति भी है, जो तेरे त्रिशूल लेने से पहिले तेरा काम तमाम कर सकता है। वह मेरा मित्र है। उसकी आज्ञा पालन करने के लिये ही मैं तेरे व्याघ्रमंडल में घुसा था। समझे?"—समरसेन ने कहा।

व्याघ्रदत्त यह सुन और भी अधिक घबरा गया। वह सोचने लगा कि काम उतना आसान न था जितना कि वह सोच रहा था।

"वह कौन है, जो मुझे रोक सकता है?"—व्याघ्रदत्त ने पूछा।

"चतुर्नेत्र"—समरसेन ने ज़ोर से जवाब दिया।

"चतुर्नेत्र" शब्द ने केवल व्याघ्रदत्त में ही नहीं, परन्तु उसके सैनिकों में भी कँपकँपी पैदा कर दी। सैनिक डर के मारे अपने सरदार की ओर ताकने लगे। यह देख व्याघ्रदत्त ने साहस और बहादुरी का ढोंग किया, यद्यपि वह अन्दर ही अन्दर डर रहा था। परन्तु उसने कहा—"अच्छा, तो इसका मतलब यह हुआ कि तू उसको जानता है?"—व्याघ्रदत्त यह कह हँसने लगा।

"उसकी आज्ञा पर ही यहाँ मैं आया हूँ। यह बात तू अच्छी तरह ख्याल रख।"—समरसेन ने कहा।

व्याघ्रदत्त डर के मारे कांप गया। उसने चतुर्नेत्र, और उसकी शक्ति और चतुरता के बारे में सुन रखा था।

व्याघ्रदत्त अभी सोच ही रहा था कि क्या किया जाय कि उसे दूरी पर सैनिकों का कोलाहल सुनाई दिया। इतने में एक सैनिक ने उसके पास आकर डरते हुये कहा—"हुज़ूर, शिवदत्त अपने अनुचरों के साथ नगर के खंडहारों में प्रवेश कर रहा है।"

व्याघ्रदत्त को लगा, जैसे उस पर बिजली गिर पड़ी हो। अपने थोड़े सैनिकों के साथ शिवदत्त को मुकाबला करने का तो सवाल ही नहीं उठता था, सिवाय वहाँ से भाग निकलने के, उसके सामने कोई रास्ता न था। परंतु समरसेन का क्या किया जाय? उसने एक क्षण तो यह सोचा कि उसका काम तमाम का दिया जाय; पर वह काम खतरे से खाली न जान वह डरने लगा। क्योंकि अपने दोस्त के मारे जाने पर, हो सकता है, चतुर्नेत्र सारे व्याघ्रमंडल का ही नाश कर दे।

"समरसेन! इतना सब कुछ हो जाने के बाद, हम दोनों का इसी में भला है कि हम मित्र हो जायँ। मैत्री की क्या शर्तें हो, इस पर फुरसत से बातचीत कर सकते हैं। अब चलो, हम एक सुरक्षित स्थान पर जल्दी भाग जायँ!"—व्याघ्रदत्त ने कहा।

बाद में, बेहथियार समरसेन को साथ लेकर व्याघ्रदत्त और उसके दो सैनिक वहाँ से भागने लगे। भागते हुये उनको शिवदत्त और उसके अनुचरों और व्याघ्रदत्त के बाकी सैनिकों के लड़ने की ध्वनि सुनाई पड़ रही थी।

(अभी और है)

पागल इवान

बहुत समय पहिले रूस में एक किसान के तीन लड़के थे। उनमें से सबसे छोटे का नाम इवान था। वह कुछ पागल-सा था। इस वज़ह से उसकी माँ उसे कोई भी काम न देती थी। भाई बड़े हुये और अपना काम-धन्धा करने लगे। माँ ने इवान को अपने पास रखना चाहा।

एक दिन सबेरे बड़े भाई भेड़-बकरियों को चारागाह में चराने के लिये ले गये। माँ ने उनके लिये रोटियाँ बनाकर एक कटोरी में रखते हुये इवान से कहा—"जा, उन्हें ले जाकर भाइयों को दे आ।"

इवान कटोरी सिर पर रखकर चल दिया। कुछ दूर जाने के बाद उसने मुड़कर जो देखा तो उसको अपनी छाया दिखाई दी। वह चलता तो वह भी चलती, वह रुकता तो वह भी रुकती।

"अरे! तू कौन है? क्यों मेरे पीछे लगी हुई है?"—इवान ने अपनी छाया पर गुस्सा किया। परन्तु छाया ने कोई जबाब न दिया। वह पीछे चलती जाती थी।

"ओहो—क्या तू जान गई है कि कटोरी में रोटियाँ हैं? तो, ले यह एक, भाग!"—कहकर उसने कटोरी में से एक रोटी निकाली, छाया पर डालकर आगे बढ़ चला।

परन्तु छाया साथ चलती जाती थी। इवान ने एक और रोटी निकालकर छाया के सिर पर दे मारी! छाया तब भी चलती गई। इवान ने एक और रोटी उसके सामने फेंकी। आखिर वह आग बबूला हो उठा, और कटोरी को छाया पर मारते हुये उसने कहा—"जा मर।" वह खाली हाथ भाइयों के पास पहुँचा।

श्री श्याम शरण 'मस्त'
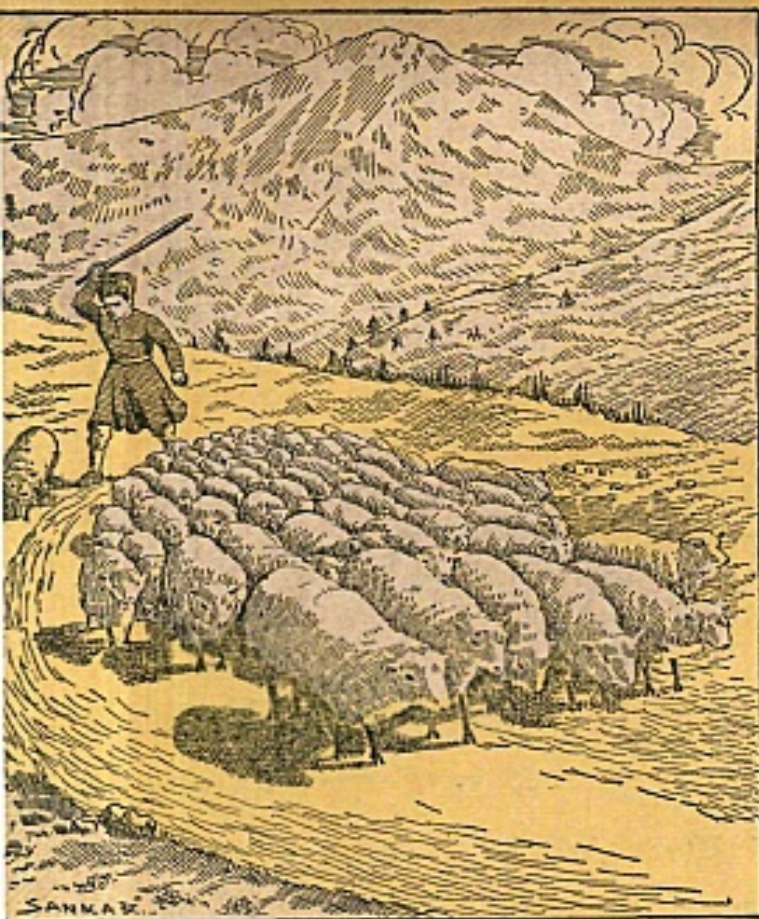
"क्यों आया है?"—भाइयों ने पूछा।

"मैं तुम्हारे लिये खाना लाया हूँ।"

"कहाँ है?"—भाइयों ने पूछा।

"माँ ने रोटी बनाकर दी थी। यह चुड़ैल मेरे पीछे पड़ गई। मैंने इसके मुख पर एक एक कर सब रोटियाँ फेंक दीं। यह सारी रोटियाँ खाकर भी मेरा पीछा नहीं छोड़ रही है। चाहो तो देख लो।"—इवान ने अपनी छाया दिखाते हुये कहा।

दोनों भाइयों ने गुस्से में छोटे भाई की खूब मरम्मत की। माँ की भेजी हुई रोटी तो फेंक दी गई थी, इसलिये उन्होंने गाँव में जाकर खाना खाने की ठानी।

"हम अभी खाना खाकर आते हैं। तब तक भेड़ों की रखवाली कर। तुझे कुछ करने की ज़रूरत नहीं है। मगर इतना ख्याल रखना कि वे तितर-बितर न हो जायें।"—दोनों भाई यह कहकर चले गये।

भाइयों के चले जाने के बाद इवान ने भेड़ों के झुण्ड को एक जगह रखने की बहुत कोशिश की। पर उन्होंने चरते चरते इधर उधर जाना शुरू कर दिया। इवान ने एक भारी लठ्ठ लिया, और उन भेड़ों की टाँगें तोड़ डालीं, जो दूर चली गई थीं।

भाइयों ने वापिस आकर देखा कि कई भेड़ों की टाँगे टूटी हुई हैं। उन्होंने इवान को खूब पीटा और घर भेज दिया। तब से इवान को उसकी माँ ने कोई काम न दिया। बहुत दिन गुज़र गये। इवान बड़ा हो गया। उसके माँ-बाप भी गुज़र गये थे। परन्तु इवान की बुद्धि न बदली—यानी वह मूर्ख ही रहा।

"इवान किसी काम का नहीं है। उसे माँ ने लाड़-प्यार कर बिगाड़ा है। उसको हम कब तक घर में बैठाकर खाना खिलायेंगे? अगर घर से अलग करते

हैं, तो सब कोई हमारी ही बुराई करेगा। उसको किसी न किसी तरह कोई काम सिखाना चाहिये।"—भाइयों ने सोचा।

क्रिसमस का त्योहार आनेवाला था। घर में कई चीज़ों की ज़रूरत थी। उन्होंने आवश्यक चीज़ों की एक फ़ेहरिश्त बनाई, और इवान से कहा कि वह शहर से गाड़ी में चीजें ले आये।

घोड़े की लगाम पकड़कर, गाड़ी पर चढ़ इवान जोश के साथ शहर की ओर चला। एक बोरी नमक, दाल, चावल, वगैरह, चार पैरोंवाली एक बेन्च, कितने ही हंडे-हंडियाँ, कप और सॉसर; थैले भर चम्मच गाड़ी में रख वह घर की ओर चला। परन्तु थोड़ी दूर जाने के बाद घोड़ा थककर धीमे धीमे चलने लगा।

"ओ हो! शायद भार अधिक हो गया है, इसीलिये घोड़ा धीमे धीमे चल रहा है। वह खींच नहीं पा रहा है। कुछ वज़न कम करना चाहिये।" यह सोच इवान ने गाड़ी में रखे समान की ओर नज़र दौड़ायी। उसे चार पैरोंवाली बेन्च दिखाई दी।

"इसके भी घोड़े के समान चार पैर हैं। नीचे उतार दूँगा तो खुद चलेगी। इसे भी
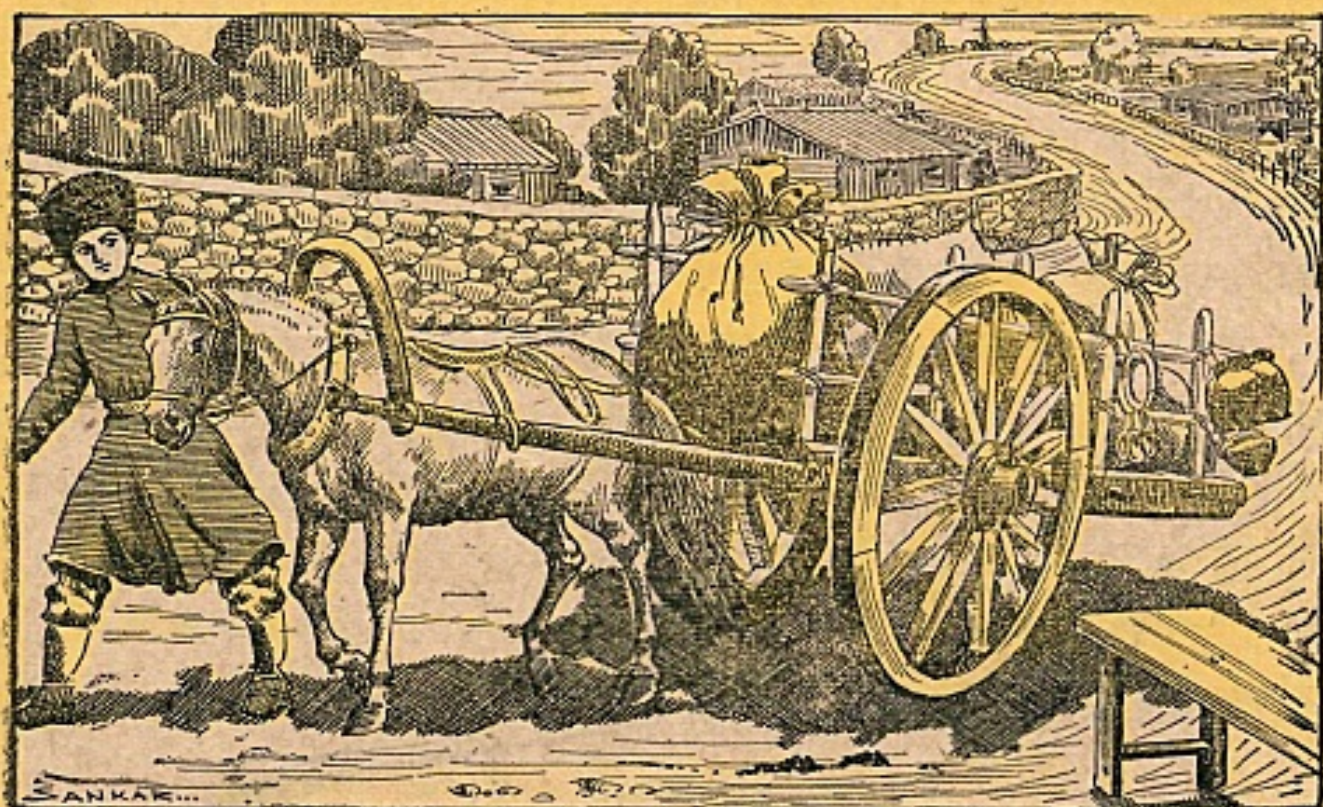
क्या सवारी चाहिये?" इवान ने बेन्च नीचे रखका कहा—"चल, घर की तरफ़।" और गाड़ी हाँकने लगा।

कुछ दूर जाने के बाद, गाड़ी के पीछे कौवे "काँय काँय" करने लगे। उन्हें गाड़ी में खाने की चीज़ें दिखाई दे रही थीं।

"अरे! अरे!! लगता है, इन कौवों को भूख लग रही है।"—इवान ने सोचा। और गाड़ी में से कप और सॉसर निकाल, उनमें दाल-चावल रख, कौवों को बुलाकर कहा—"खाओ, खूब पेट भर खाओ।" फिर वह आगे बढ़ा।

कुछ दूर और जाने पर एक जङ्गल आया। रास्ते के बगल में उसे जले हुये पेड़ों के ठूँठ दिखाई दिये।

"इन ठूँठों पर टोपियाँ नहीं हैं। रात में न जाने सरदी के मारे ये कितनी तकलीफ़ उठाते होंगे।" यह सोच उसने गाड़ी में से हँड़े निकाले और उन पर उल्टा करके रख दिये।

फिर एक नाला आया। इवान ने पानी पिया। उसने घोड़े को भी पानी पिलाना चाहा। उसने बड़ी जबरदस्ती की, पर घोड़े ने पानी छुआ तक नहीं।

"क्योंकि पानी में कोई स्वाद नहीं है, इसीलिये शायद घोड़ा पानी नहीं पी रहा है"—यह सोचकर इवान ने नाले में बोरी भर नमक उड़ेल दी। "पी, अब पी"—उसने घोड़े से कहा। जब घोड़े ने पानी न छुआ तो इवान उबल उठा।

"तेरे लिये सारा नमक पानी में डाल दिया। तब भी तू क्यों नहीं पीता है? तुझे इतना घमंड?" उसने गुस्से में घोड़े के सिर पर अपने मोटे लठ्ठ से दो जमाये। घोड़ा वहीं ठंडा हो गया।

अब घर ले जाने के लिये ऐसा खास समान बाकी नहीं रह गया था। चम्मचों,

की थैली उसने कंधे पर रखी और चल दिया। जब वह एक कदम उठाकर दूसरा रखता तो थैली में आवाज़ होती। उसे ऐसा लगता, जैसे आवाज़ कह रही हो—"पागल इवान, पागल इवान।"

इवान को गुस्सा आ गया। उसने थैली नीचे पटकी और पैर से कुचलते हुये कोसने लगा—"मरो, हो तुम्हारा सत्यानाश!" वह खाली हाथ घर पहुँचा।

"गाड़ी कहाँ है?—भाइयों ने पूछा।

इवान ने सब कुछ सुनाया। भाइयों के गुस्से की हद न थी। "जा मूर्ख! कम से कम पेड़ पर रखे हंडे-हंडियाँ कप-सॉसर तो बटोर ला। नहीं तो तेरा काम तमाम कर देंगे।"—भाइयों ने धमकाया।

इवान फिर वापिस दौड़ा। उसने हंडे-हंडियाँ, कप-सॉसरों में छिद्र किया, और उसमें से एक धागा निकालकर, उन्हें पीठ पर लादकर घर ले आया।

भाई गुस्सा न रोक सके। उन्होंने इवान की चटनी बना दी। वे स्वयं त्योहार के लिये ज़रूरी चीजें खरीदने निकले। इवान रोता-पीटता घर में बैठा रहा। थोड़ी देर में उसे लगा कि कोई उसे देखकर हँस रहा है। जब जाकर देखा तो रसोई में, चूल्हे पर चावल उबल रहे थे।

"अरे ठहर भी। तू भी मुझे चिढ़ाता है"— इवान ने कहा।

हंड़िया में शब्द और अधिक हो गया। इवान को गुस्सा आया। लठ्ठ से हंड़ी पर एक चोट मारी। हंड़ी टूट गई। जब भाई घर आये तो खाने के लिये भात भी न था।

भाइयों ने समझ लिया कि वह सचमुच पागल है, उसे सुधारना असम्भव है। वे लाचार हो, उसका पालन-पोषण करने लगे।
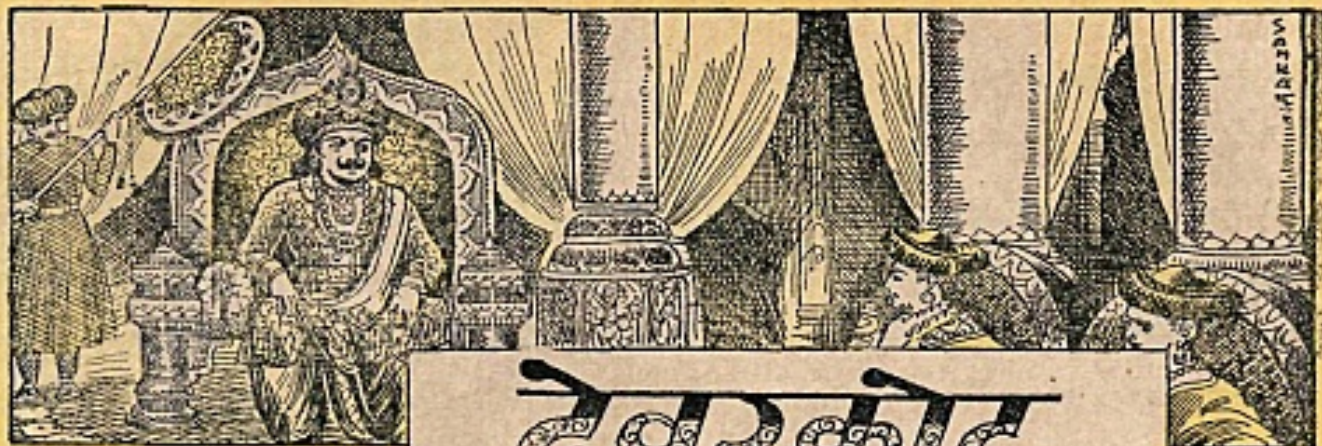
देवरकोट

कृष्णदेवराय के दरबार में बड़े कवि और पंडित रहा करते थे। यह चार सौ साल पहिले की बात है।

एक बार पंडितों को एक सन्देह हुआ। वह सन्देह था—युधिष्ठिर के भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव चार भाई थे। श्री रामचन्द्र के लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न तीन भाई थे। युधिष्ठिर के भाइयों ने उसके प्रति कितनी ही भक्ति और श्रद्धा दिखाई। उसके साथ वे भी जङ्गलों में गये। अज्ञातवास भोगा। श्री रामचन्द्र के भाइयों ने भी उनके प्रति अत्यधिक आदर-सम्मान दिखाया। लक्ष्मण ने चौदह साल तक भाई के साथ बनवास भुगता, रात-दिन उनकी रक्षा करता रहा, एक क्षण भी आँख न मींची। भरत ने कोसल का राजा होने पर भी, सिंहासन पर भाई की खड़ाऊँ रखीं, पर स्वयं कभी न बैठा। अब समस्या यह थी कि युधिष्ठिर के भाई अधिक श्रद्धालु थे, या राम के भाई?"

दरबार में कई ने युधिष्ठिर के भाइयों का पक्ष लिया, तो कई ने राम के भाइयों का समर्थन किया। पर वाद-विवाद समाप्त न हुआ। आखिर पंडितों ने कृष्णदेवराय से निर्णय देने के लिये कहा। उन्होंने इस प्रकार निर्णय दिया—

"श्री रामचन्द्र के भाई किसी तरह से उनसे अधिक समर्थ न थे। हर बात के लिये उन पर वे आधारित थे। पर युधिष्ठिर के भाइयों के बारे में ऐसी बात न थी, वे कई बातों में बड़े भाई से बढ़-चढ़कर थे। तब भी उन्होंने भाई के लिये सब कुछ बलिदान किया। इस कारण युधिष्ठिर के भाइयों की भक्ति-श्रद्धा अधिक थी।"

श्री य. अर्जुनराव

यह सुन पंडित खुश हुये। परन्तु चामर हिलानेवाले धोबी ने कहा—"इस जन्म में भी देवराय पांडवों का पक्षपात कर रहे हैं।" उसका मतलब था कि राजा कृष्ण देवराय श्री कृष्ण के अवतार थे।

राजा को धोबी की बात सुनकर बहुत प्रसन्नता हुई। उन्होंने अपने मन्त्री तिम्मरुसू को बुलाकर कहा—"धोबी को जो चाहिये, वह दिल्वा दीजिये।"

तुरंत धोबी ने कहा—"मुझे 'देवर कोट' (तेलुगु शब्द, जिसका अर्थ है "कृष्णदेवराय का किला") दिलवा दीजिये।"

तिम्मरुसू चकित रह गया। धोबी को अलग ले जाकर कहा—"कुछ और माँग ले, ज़रूर दिलवा दूँगा।"

धोबी ने सविनय कहा—"मुझे और कुछ नहीं चाहिये महाराज!"

कई दिन बीत गये। एक दिन कुछ लोग कृष्णा नदी के किनारे से दरबार में आये। तिम्मरुसू ने उनसे मालूम कर लिया कि वे "देवरकोट" नाम के गाँव से आये थे।

"देवरकोट कहाँ है?"—तिम्मरुसू ने पूछा।

"कृष्णानदी के उत्तर में एक गाँव है।"—उनमें से एक व्यक्ति ने कहा।

तुरंत तिम्मरुसू ने धोबी को बुलाकर कहा—अरे तुझे "देवरकोट" दे दिया है। आज ही जा, कब्जा कर ले। वह कृष्णा-नदी के परले पार है।"

धोबी स्तब्ध रह गया। वह आशा बाँधे बैठा था कि राजा का किला उसे मिलेगा। उसकी आशा निराशा ही नहीं हुई, बल्कि उसे दरबार में अपनी नौकरी से भी हाथ धोना पड़ा।

सच्चाई

एक समय था, जब कि विदर्भ में बहुत चोरियाँ और डकैतियाँ हुआ करती थीं। उस देश का राजा नवयुवक था। राज्य में यह अशान्ति देख उसे बड़ा दुःख होता था। होने को तो सिपाही, सैनिक, कर्मचारी, कोतवाल, जल्लाद, बगैरह सब थे, पर वे चोरों को नहीं पकड़ पाते थे।

राजा ने सोचा, अगर चोरों को कड़ी सज़ा दी गई, तो हो सकता है कि चोरियाँ कम हो जायें। राजा ने हुक्म दिया कि जो कोई चोर पकड़ा जाय, उसका सिर काट दिया जाय। छोटी-छोटी चोरी करनेवालों का भी सिर काट दिया गया।

परन्तु चोरीयाँ कम होने के बजाय और अधिक होने लगीं। आखिर बात क्या है, यह जानने के लिये राजा परदेशी का वेष धर आधी रात राजधानी से निकल पड़ा और सबेरे होते होते दस मील दूर एक गाँव में पहुँचा। जब राजा चौराहे के पास पहुँचा तो गाँव के बड़े-बुजुर्ग वहाँ दिखाई दिये। वहाँ जाकर उसने कहा—"आपके देश में, सुनते हैं, चोरियाँ बहुत अधिक हो रही हैं। न जाने, आप कैसे जी रहे हैं?"

"जिनके पास पैसा है, उन्हीं को डर होगा, भला हमें क्या डर? इन सरकारी कर्मचारियों ने तो हमें कभी का लूट रखा है?"—उनमें से एक बूढ़े ने बताया।

"रोज़ चोरियाँ होती हैं, पर एक भी चोर नहीं पकड़ा जाता। यहाँ के चोर तो बहुत चालाक नज़र आते हैं।"—राजा ने कहा।

"बड़े बड़े चोरों की सरकार रक्षा करती है और छोटे छोटे चोरों की जनता मदद करती है। चोरों के न पकड़े जाने के कारण इससे बढ़कर और कुछ भी नहीं हैं।"

श्री शीतल प्रसाद

"छोटे चोरों को जनता क्यों बचाती है?"—राजा ने पूछा।

"क्यों कि वे बड़े चोरों की तरह झूटे और बेईमान नहीं हैं। छोटे चोर सच्चे होते हैं।"—बूढ़े ने कहा।

राजा वहाँ से एक और गाँव में गया। उसने एक बेकार व्यक्ति से पूछा—"बाबू! मैं परदेशी हूँ। मैं इस देश में सचाई से चोरी करके जीना चाहता हूँ। पर वह कला मैं नहीं जानता हूँ। क्या आप मेरी मदद कर सकेंगे?"

"पर तुम्हें कैसे मालूम हुआ कि मैं चोर हूँ।"—उस आदमी ने पूछा।

"क्योंकि मैं भी एक चोर हूँ, इसलिये दूसरे चोर को पहिचान लेता हूँ।"—राजा ने कहा।

"शाबाश, अगर तूने सचाई और नेकी निभाई तो ज़रूर तरक्की करेगा!"—चोर ने आशीर्वाद दिया।

"आप मुझे अपने साथ एक बार चोरी के लिये ले जाइये। बाद में अपना रास्ता मैं खुद देख लूँगा।"

"तो फिर चल, आज राजा के खज़ाने में सेंध डालें।"—चोर ने कहा।
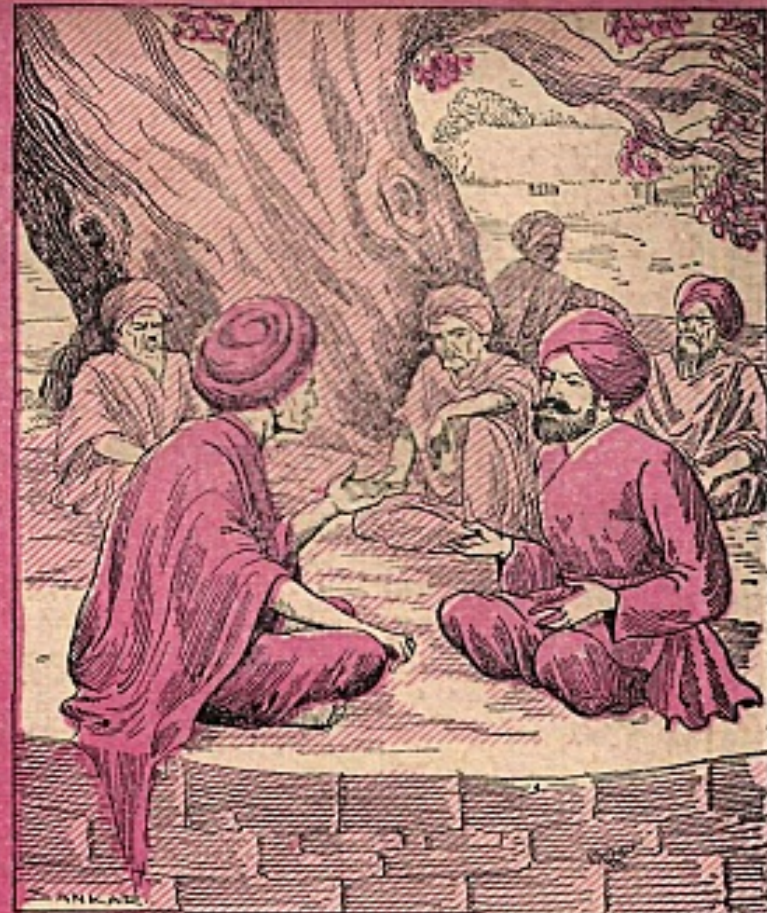
"वह तो खतरनाक काम है न? अच्छा होगा, अगर किसी छोटे-मोटे घर में चोरी करें!"—राजा ने सुझाया।

"छी! तू तो कोई बड़ा चोर मालूम होता है। हम छोटे चोर हैं, इसलिये बड़े घरों में चोरी करते हैं!"—चोर ने कहा।

अंधेरा होते ही वे चल पड़े और आधी रात होते होते वे राजधानी में पहुँचे।

"बाबू! इस चोरी में मेरा कितना हिस्सा रहेगा?"—राजा ने पूछा।

"दोनों का आधा आधा"—चोर ने कहा।

"परन्तु आपको तो मुझसे अधिक अनुभव है न? आपका अधिक लेना मुनासिब है न?"—राजा ने पूछा।

"नहीं तो! अगर हम पकड़े गये तो दोनों को बराबर सजा मिलेगी। इसलिये चोरी का माल बराबर बाँट लेना ठीक है।"—चोर ने कहा। चोर की ईमानदारी पर आश्चर्य करते हुये राजा ने पूछा—"क्या आपकी बात पर विश्वास किया जा सकता है?"

"मैं झूट नहीं बोल सकता। झूट को मैंने गुरु-दक्षिणा के रूप में दे दिया है।"—चोर ने बताया।

चोर ख़ज़ाने में पहुँचा। कोई उसको देख न पाया। दोनों अन्दर गये। एक सोने की पिटारी में तीन बड़े बड़े हीरे थे।

"तीन हीरों को तो हम बराबर बाँट नहीं सकते। इसलिये हम दो ले लें, और एक यहाँ छोड़ दें। अगर तूने यह हीरा बेच लिया, तो जिन्दगी आराम से कट जायेगी।"—चोर ने कहा। उन्होंने और कुछ न लिया।

राजा चोर से इज़ाज़त ले अपने महल में चला आया।

सवेरे पहरेदारों ने ख़ज़ाने में सेंध देख कर मन्त्री को खबर दी। मन्त्री ने आकर देखा कि दो हीरे ही चोरी गये हैं। उसने चुपके से तीसरा हीरा अपनी जेब में डाल लिया और राजा से जाकर कहा कि तीन हीरे चोरी चले गये हैं।

राजा ने मन्त्री से कहा कि अगर फ़लाने गाँव में फ़लाने आदमी को पकड़कर लाया गया, तो चोरी पता लग जायेगी। सिपाही चोर को पकड़ लाये।

"महाराज! मैंने और एक और चोर ने दो हीरे चुराकर आपस में बाँट लिये थे। तीसरे हीरे को तो हमने छूआ तक नहीं था। देखिये यह है वह हीरा!"—कहते हुये चोर ने हीरा दे दिया।

"इसी ने दो हीरे और कहीं रख दिये होंगे। इसको फाँसी पर चढ़वाइये!"—मन्त्री ने सलाह दी।

"दूसरे चोर को मैंने पकड़ लिया है। उसने भी अपना हीरा मुझे दे दिया है। और वह हीरा यह है।" राजा ने अपनी जेब में से हीरा बाहर निकाला।

"यानी तीसरे हीरा ले जानेवाले को पकड़ना है। मुझे एक महीने का समय दीजिये।"—मन्त्री ने कहा।

"इस छोटी सी बात के लिये महीना भर चाहिये? शायद तीसरा हीरा आपकी जेब में ही हो....!"—राजा ने कहा।

मन्त्री ने काँपते हुये हाथों से जेब में से तीसरा हीरा बाहर निकाला।

राजा ने मन्त्री को फाँसी दिलवाई। और उसके स्थान पर चोर को नियुक्त किया। उसकी नियुक्ति के कारण "बड़े" चोर सब बदल गये और धीरे धीरे "छोटे चोर" भी जाते रहे।

युक्ति युक्त झूट

राजा यशोवर्धन काशी पर राज्य करता था। उन दिनों वहाँ का व्यापार बढ़ रहा था। आसपास के राज्यों में दूसरे धनवालों का शासन स्थापित हो रहा था। काशी के व्यापार के लिये तो यह ज़रूरी था कि दूसरे राज्यों से व्यापार सम्बन्धी समझौते किये जायें। समझौतों को निभाने के लिये एक चतुर दूत-दल का प्रबन्ध करना आवश्यक था। यथा अवसर झूट बोलकर दूसरे व्यक्ति को द्विविधा में डालनेवाला ही दूत-कार्य कर सकता था, गला फाड़कर सच बोलने वाला नहीं।

दूत बनने लायक देश में कितने व्यक्ति हैं—यह जानने के लिये यशोवर्धन ने एक उपाय सोचा। उसने घोषित किया कि दरबारियों में झूट बोलने की प्रतियोगिता होगी, और जो कोई सबसे अधिक युक्तियुक्त झूट बोल सकेगा, उसको मैं अपनी लड़की और आधा राज्य दूँगा।

दरबारी चकित होकर एक दूसरे की तरफ़ देखने लगे। उनमें से कइयों ने राजा की लड़की के साथ आधा राज्य पाना चाहा।

एक व्यक्ति ने खड़े होकर कहा—"महाराज! मैंने बचपन में एक ही साथ पूर्व में सूर्योदय और पश्चिम में चन्द्रोदय होते देखा है।"

"बचपन की वज़ह से पूर्व को पश्चिम और पश्चिम को पूर्व समझ लिया होगा। उसी तरह अस्त होने के समय को उदय होने का समय समझ लिया होगा।"—राजा ने कहा।

एक और व्यक्ति ने कहा—"महाप्रभू! हमारे शहर में कई लोग गर्मियों में,

श्री रा. राम डुइ

बरतनों में धूप इकट्ठा का लेते हैं और उससे बरसात में खाना-पकाते हैं।"

"इस तरह शायद ईन्धन में बचती कर लेते होंगे"—राजा ने मुस्कुराते हुये कहा।

फिर एक और ने कहा—"महाराज! हमारे गाँव में कई सिर के बल चलते हैं! मुख से सुनते हैं! नाक से देखते हैं। कान से खाते हैं।"

"उससे उनके जीवन में भला क्या परिवर्तन हुआ?"—राजा ने पूछा।

इस तरह कई झूट बोले गये, पर वे सब निरर्थक थे। उनमें युक्ति एक में भी न थी। अगर ऐसे लोगों को काशी राज्य के बाहर दूत बनाकर भेजा जाता, तो काशी राज्य का परिहास ज़रूर होता।

राजा अभी यह सोच ही रहा था कि एक व्यक्ति ने खड़े होकर कहा—"महाराज! आपने न केवल मेरी बपौती ही हड़पी, बल्कि ऐसे झूट बोलनेवालों को मेरी सम्पत्ति बाँट भी रहे हैं। मैं यह कभी मंजूर न करूँगा।"

राजा चकरा गया। भरे दरबार में वह यह कह रहा था कि काशी राज्य उसकी बपौती थी। अगर यह बात सच है, तो इस व्यक्ति को सारा राज्य दे देना चाहिये। अगर झूट है, तो मानना पड़ेगा कि उसने राजा को द्विविधा में डाल दिया था। यही युक्ति युक्त झूट था।

राजा ने खड़े होकर कहा—"तुम्हारा झूट सुनकर हमें बड़ी खुशी हुई। तुम्हें शीघ्र ही मैं आधा राज्य दूँगा, और अपनी लड़की की शादी भी तुम से कर दूँगा।"

वह काशी राज्य का दामाद बन गया। उसने दौत्य-कार्य में भी बड़ी सफ़लता पाई।

राजा भोज कविता का बहुत शौकीन था। परन्तु कविता के प्रति उसका इतना पक्षपात था कि सिवाय कवियों के उसके दरबार में किसी और का आदर न होता था। यह नौबत आई कि बड़े बड़े पंडित भी भोजन के लाले पड़ने लगे। कुछ पंडितों ने निश्चय किया कि जैसे तैसे वे एक श्लोक लिखेंगे, और ईनाम पाकर अपना पेट भरेंगे। क्योंकि राजा भोज के पास भिक्षा माँगने के लिये भी कविता की आवशकता थी।

एक दिन वे ब्राह्मण धारा नगर के मुक्तेश्वर के मन्दिर में श्लोक लिखने के लिये बैठे। अगर आठ अक्षर प्रति पंक्ति के हिसाब से चार पंक्ति बनाई गईं, तो एक श्लोक हो जाता है—सिर्फ़ इतना ही उन्हें मालम था। परन्तु वे श्लोक के लिये भाव नहीं सोच पाये। उनको एक ही समस्या सता रही थी, और वह समस्या थी भूख की।

एक ब्राह्मण ने कहा कि लिखें—"भोजनं देहि राजेन्द्र।" दूसरों ने उसकी वाह वाह की। श्लोक की एक पंक्ति ही पूरी हो पाई। अभी तीन पंक्तियाँ और लिखनी थीं।

"राजा से भोजन मांगने पर दाल और घी भी माँगना ठीक होगा। इसलिये हम यह भी लिखें—"घृत सूप समन्वितं" एक और ब्राह्मण ने कहा।

"यह तो बहुत अच्छा है!"—दूसरों ने कहा। उनके श्लोक की पंक्तियाँ यों बनीं :

"भोजनं देहि राजेन्द्र
घृत सूप समन्वितं

आधा श्लोक हो गया। अभी आधा बाकी था। परन्तु बिचारे ब्राह्मण सोच

श्री जितेन्द्र प्रसाद शुक्ल

नहीं पा रहे थे कि क्या लिखा जाय? जो दाल वगैरह वे माँगना चाहते थे, उन्होंने दूसरी पंक्ति में माँग ही लिया था। बाकी पंक्तियों में वे क्या लिखें?

उसी समय महाकवि कालिदास वहाँ आये। उन्होंने देखा कि ब्राह्मणों ने श्लोक की दो पंक्तियाँ तो बना ली हैं, पर दो और पंक्तियों के लिये बिचारे माथापच्ची कर रहे हैं। कालिदास को उन्हें देखकर दया आई। उनकी कविता सुनकर राजा भोज एक पैसा भी न देगा, यह वे जानते थे।

"महाशयो! अगर आपको आपत्ति न हो, तो श्लोक का बचा हुआ हिस्सा मैं लिखे देता हूँ। पूरा श्लोक राजा को सुनाकर जो कुछ मिले, प्राप्त कीजिये"— कालिदास ने कहा।

"इससे अधिक भला हमें और क्या चाहिये? ठीक समय पर तुम भगवान की तरह अवतरित हुए हो। बाकी दो पंक्तियाँ तुम लिख दो। तुम्हारा भला हम न भूलेंगे"— ब्राह्मणों ने कहा।

"राजा भोज से भात के साथ दाल और घी तो माँग ही लिया है। शरत्-

ऋतु की चन्द्रमा की चान्दनी की भांति सफ़ेद भैंस के दूध का दही भी दिलवाने के लिये लिखिये —" कालिदास ने कहा।
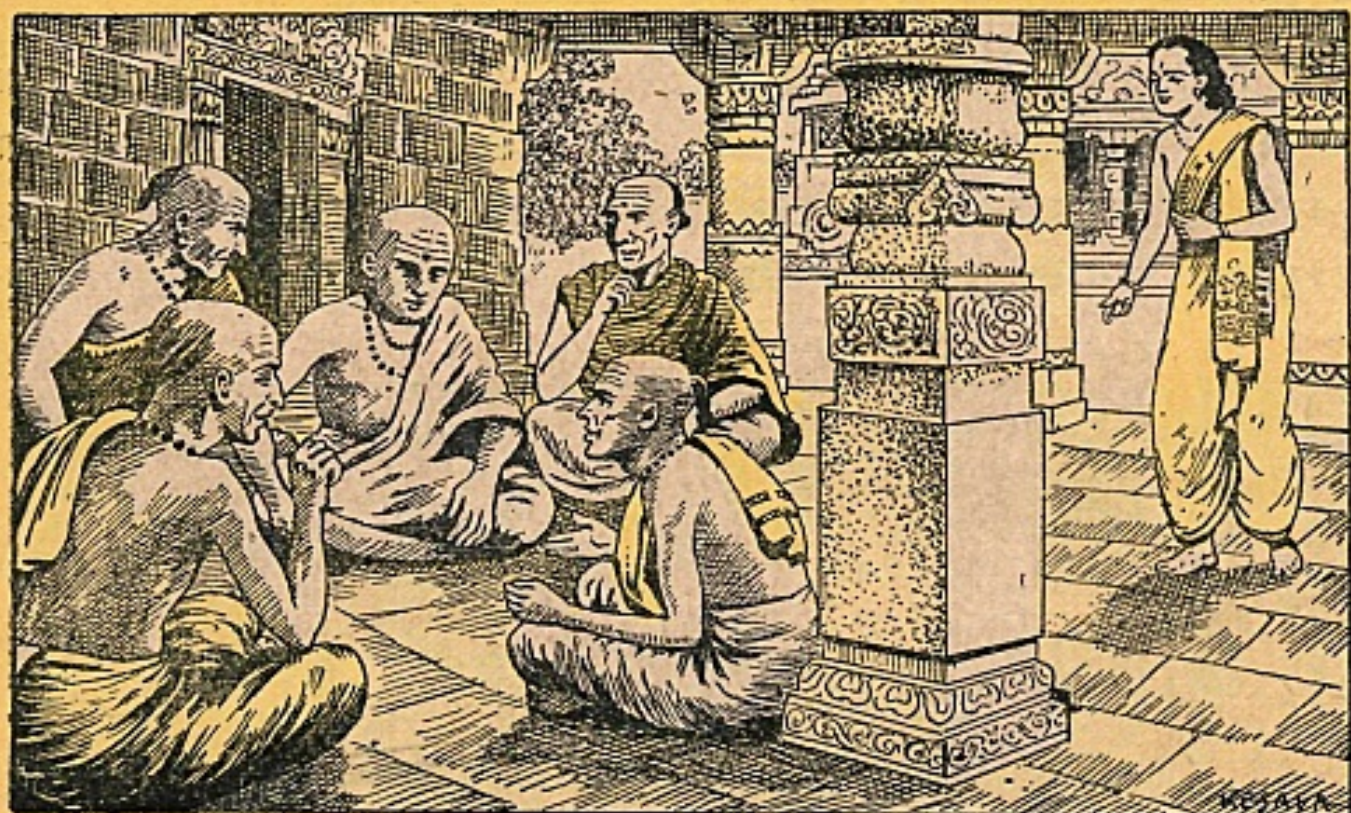
ब्राह्मणों के कान में ज्योंही "भैंस के दूध का दही" की बात पड़ी तो वे फूले न समाये। खुशी से पूछने लगे—"देखें कैसे? कहो तो?"

"माहिषंच शरचन्द्र
चन्द्रिका धवलं दधि"

कहकर कालिदास ने उनका श्लोक पूरा कर दिया। यद्यपि उस श्लोक का भाव भले ही उन्हें समझ में न आया हो, पर यह जान कर कि जैसे तैसे श्लोक पूरा हो गया है, ब्राह्मणों ने प्रसन्न हो, कालिदास को धन्यवाद दिया, और वहाँ से चले गये।

अगले दिन वे दरबार में गये। उनको बड़े मुश्किल से राजा का दर्शन मिला। राजा भोज के सामने खड़े होकर सविनय कंठस्थ श्लोक पढ़ने लगे।

भोजनं देहि राजेन्द्र
घृत सूप समन्वितं
माहिषंच शरचन्द्र
चन्द्रिका धवलंदधि!

यह श्लोक सुनते ही राजा भोज ने कहा—"इस श्लोक के प्रथम भाग के बनानेवाले को कविता ही नहीं आती। परन्त दूसरे भाग के लिखनेवाला सिवाय कालिदास के और कोई नहीं हो सकता। इन दो पंक्तियों के लिये एक लाख रुपये फ़ी अक्षर देकर इन ब्राह्मणों को विदा कीजिये।"

ब्राह्मण चकित हो गये। जब दरबार में चारों तरफ़ देखा तो उन्हें कालिदास दिखाई दिये। उन्होंने समझा कि कालिदास ने ही उन्हें भिक्षा दिलवाई है। वे धन लेकर अपने अपने रास्ते पर चले गये।

पुराने ज़माने में उज्जयिनी में यशस्कर नाम का एक ब्राह्मण रहा करता था। उसका लड़का शशिभूषण बहुत ही सुन्दर और नेक था। जब वह गुरु के पास शिक्षा प्राप्त कर रहा था तो उसका विजयसेन से स्नेह हो गया। वह क्षत्रिय था।

एक बार विजयसेन के साथ उसकी बहिन मदिरावती गुरु के पास आई। मदिरावती भी बहुत रूपवती थी। ज्योंही शशिभूषण की नज़र उस पर पड़ी, त्योंही उसको उससे प्रेम हो गया।

मदिरावती ने घर जाकर शशिभूषण के बारे में अपनी माँ को बढ़ा-चढ़ाकर कहा। माता ने विजयसेन से शशिभूषण को एक बार बुला लाने के लिये कहा।

अगले दिन विजयसेन मित्र शशिभूषण को साथ लेकर अपने घर आया। जब विजयसेन अपने पिता से कुछ बातचीत कर रहा था, तब मदिरावती की सहेली धात्रेय ने अकेले में बैठे हुये शशिभूषण को मालती के फूलों की एक माला देकर कहा—"इसको मेरी सहेली मदिरावती ने बिना किसी के जाने तुम्हारे लिये तैयार की है। इसे ले लो।"

"ज़रूरत हुई तो तेरी सहेली के लिये मैं अपने प्राण भी दे दूँगा।"—शशिभूषण ने धात्रेय से कहा।

तब से शशिभूषण और मदिरावती अक्सर आपस में बातचीत किया करते। दिन प्रति दिन उनका प्रेम बढ़ता गया।

इस बीच में एक क्षत्रिय युवक ने मदिरावती के पिता के पास आकर कहा कि उसका विवाह मदिरावती से कर दिया जाय। पिता को तो मालूम न था कि उसकी लड़की किसी और से प्रेम कर रही

श्री संतोषकुमारी मल्तानी
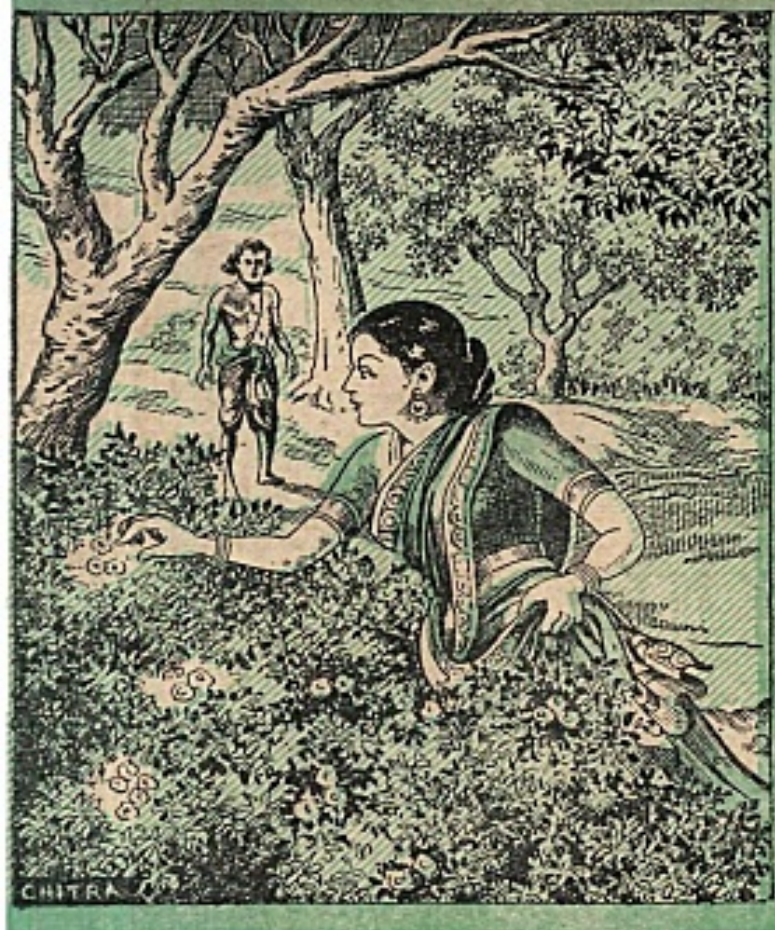
थी। इसलिये उसने उस क्षत्रिय युवक का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया और विवाह के लिये मुहूर्त भी निश्चय कर दिया।

तब शशिभूषण की बुरी हालत हो गई। उसने सोचा कि कम से कम मदिरावती को एक बार देखकर अपने मन को सांत्वना दूँ। पर देखने का मौका न मिला।

विवाह का दिन आ गया। बरात के साथ दुल्हा भी आ पहुँचा।

तब तक शशिभूषण आशा लगाये बैठा था कि शायद मदिरावती का विवाह उस व्यक्ति से न हो। वह आशा भी अब जाती रही। शशिभूषण ने सोचा कि इस दुःख को सहने से अच्छा तो आत्म-हत्या कर लेना है। "विवाह-मण्डप में जाने से पहिले मदिरावती अपनी सहेलियों के साथ, शहर के बाहर वाले मन्दिर में ज़रूर कामदेव की पूजा करने आयेगी। उस मन्दिर के पास ही एक बढ़ का पेड़ है। उस पेड़ से लटककर अगर आत्म-हत्या कर ली, तो कम से कम मदिरावती उसका शव तो देख सकेगी।" यह सोचकर शशिभूषण वहाँ गया।

इस बीच में, मदिरावती की सहेली धात्रेय उस दिन प्रातःकाल शंखहृद नाम के तालाब में स्नान करने गई। जब वह तालाब के किनारे फूल तोड़ रही थी तो उसको सोमदत्त नाम का एक ब्राह्मण नवयुवक दिखाई दिया। एक नौज़वान को एकटक घूरता हुआ देख कर धात्रेय ने शर्म से आँखें नीचे कर लीं।

उसी समय दूरी पर कुछ शोर सुनाई दिया। जंजीरें तोड़कर एक मद मस्त हाथी उन्हीं की तरफ़ तेज़ी से भागा आ रहा था। धात्रेय अभी सोच ही रही थी कि क्या किया जाय, इतने में परदेशी सोमदत्त ने उसे अपने हाथों में उठाया और दूरी पर खड़ी भीड़ में पहुँचा आया।

इससे पहिले कि वह उस नव-युवक का परिचय पाती, वह मस्त हाथी भीड़ की ओर दौड़ने लगा। लोग जहाँ तहाँ भागने लगे। सोमदत्त भी भागा। जब वह वापिस धात्रेय का हाल जानने के लिये आया तो वह वहाँ न दिखाई दी। उसकी प्रिय सहेली मदिरावती के विवाह का मुहूर्त समीप आ गया था, इसलिये उसे सोमदत्त के बारे में सोचने का मौका ही न मिला।

उसने जिस लड़की की रक्षा की थी, सोमदत्त को उसका नाम भी न मालूम था। उसने सोचा—"कुछ भी हो, जबतक उसको न देख लूँगा, तबतक चैन न लूँगा।" वह बहुत दूर तक चलता रहा। जब वह चलता चलता मन्दिर के पास गया, तो उसने एक युवक को बढ़ के पेड़ पर से लटका हुआ पाया। सोमदत्त झट पेड़ के पास गया। नवयुवक के शरीर को नीचे उतारकर देखा। शरीर में प्राण था। शशिभूषण बेहोश हो गया था, पर वह मरा न था। सोमदत्त ने उसकी सेवा-सुश्रूषा की।

थोड़ी देर में शशिभूषण को होश आया। उसने उठकर सोमदत्त को देखा और कहा—"तुमने मेरे प्राण बचाकर

बड़ी कृपा की। तुम कौन हो? तुम मुझे क्यों जिला रहे हो? मेरा जीवन निरर्थक है।" उसने उसे अपनी कहानी सुनाई।

सब कुछ सुनकर सोमदत्त ने कहा—"अरे नादान! क्या यही पुरुष लक्षण है? मैंने भी तुम्हारी तरह एक कन्या से प्रेम किया है। यह जाने बिना ही कि वह कौन है और कहाँ रहती है, मैं उसकी खोज कर रहा हूँ।" कहते हुये उसने भी अपनी कहानी सुनाई।

वे जब इस तरह बातें कर रहे थे, तो दूरी पर उनको विवाह की शहनाइयाँ सुनाई देने लगीं।

"वह देखो। मदिरावती पूजा करने चली आ रही है।"—शशिभूषण ने कहा।

"आओ, अगर ऐसी बात है, तो हम मन्दिर में मूर्तियों के पीछे छुप जायें। हो सकता है, हमें भी कोई मौका मिल जाय।"—सोमदत्त ने कहा।

उनके मूर्तियों के पीछे छुप जाने के थोड़ी देर बाद मदिरावती ने अपनी सहेलियों के साथ मन्दिर में प्रवेश किया। और सब तो दरवाज़े के पास रह गये। मदिरावती ने मन्दिर के अन्दर जाकर दरवाज़ा बन्द कर लिया। वह कामदेव से प्रार्थना करने लगी—"कामदेव! मैंने तो एक को प्रेम किया और तू मेरा किसी और से विवाह करा रहा है। यदि मेरी इच्छा इस जन्म में पूरी होनेवाली नहीं है, तो कम से कम अगले जन्म में ही शशिभूषण की पत्नी होने का सौभाग्य देकर मुझे अनुगृहीत कर!"—वह अपना गला घोंटने लगी।

ठीक उसी समय शशिभूषण मूर्ति के पीछे से कूदकर आया और उसको आत्म-हत्या करने से उसने बचाया। सोमदत्त भी बाहर निकल आया।

"बातों के लिये समय नहीं है। अन्धेरा हो गया है। तुम अपनी प्रियतमा को मेरे कपड़े पहिनाकर किसी और गाँव में ले जाओ। इस बीच में मैं इसके कपड़े पहिनकर बाहर जाता हूँ।"—सोमदत्त ने सलाह दी।

सोमदत्त ने मदिरावती के कपड़े पहिन लिये, और मुँह पर घूँघट निकाल लिया, ताकि उसे कोई पहिचान न पाये। किवाड़ खोलकर बाहर आया। सहेलियों ने भी समझा कि मदिरावती ही बाहर आई है। वे गाते-बजाते, खुशी से वापिस चले गये। उनके चले जाने के बाद, शशिभूषण और पुरुष वेष को धारण किये हुये मदिरावती, रात भर जंगल में चलकर सबेरे अचलपुर नामक गाँव में पहुँचे। वहाँ उनको एक ब्राह्मण ने आश्रय दिया। उसने ही वहाँ उनका शास्त्रोक्त विधि से विवाह कराया।

और इधर, जब मदिरावती के वेष में सोमदत्त घर पहुँचा तो धात्रेय शंखहृद से नहा-धोकर वापिस आ गई थी। अपने अनुभव को अपनी प्रिय सखी को सुनाने के लिये उसके पास अधिक समय न था। इसलिये धात्रेय ने मदिरावती की बाँह पकड़कर कहा—"सखी! मैं तुम्हें एक बात

बताना चाहती हूँ।" उसे वह अकेले एक कमरे में ले गई। घूँघट में से धात्रेय को देखकर सोमदत्त आश्चर्य से सोचने लगा—"क्या मैं स्वप्न देख रहा हूँ? नहीं तो क्या यह भगवान का अनुग्रह है?"

"सखी! तुम्हारा एक ऐसा व्यक्ति पति होने जा रहा है, जो तुम्हारा प्रेमी नहीं है। तुम्हारा कष्ट मैं जानती हूँ। जब कभी तुम अपने कष्ट न झेल सको तो मेरी बात याद करके ढाढ़स बाँध लेना। क्योंकि मैं भी एक अभागिन हूँ। तुम्हारी तरह मैंने भी एक को प्रेम किया है। परन्तु वे कौन हैं? कहाँ रहते हैं? क्या नाम है? इतना भी नहीं जानती। तुम शायद अपने प्रेमी को देख लो। पर मुझे तो कोई आशा नहीं है।"—धात्रेय ने अपनी कहानी सुनाई।

यह सुनकर सोमदत्त फूला न समाया। धात्रेय की बात पूरी होते ही उसने अपना मुँह दिखाया। धात्रेय के आनन्द और आश्चर्य की सीमा न रही। जब तक सोमदत्त ने पूरी तरह न बता दिया कि मदिरावती शशिभूषण के साथ कैसे चली गई थी, धात्रेय को अपनी आँखों पर ही विश्वास न हुआ।

"हमारे इस तरह गप्पे मारते रहने से काम नहीं चलेगा। अगर हम भी कहीं जल्दी न भाग गये, तो हमारा भेद भी खुल जायेगा।"—सोमदत्त ने कहा।

धात्रेय ने अपने गहनों की एक पोटली बाँधी। सोमदत्त को साथ लिया, पिछवाड़े में से बाहर जाकर, अन्धेरे में, बगीचे में से होते हुये शहर के बाहर चले गये। वहाँ से वे जल्दी जल्दी भाग गये। जाते जाते वे एक ब्राह्मण के गाँव में पहुंचे। वहाँ उनका विधिपूर्वक विवाह हुआ, और वे सुख से रहने लगे।
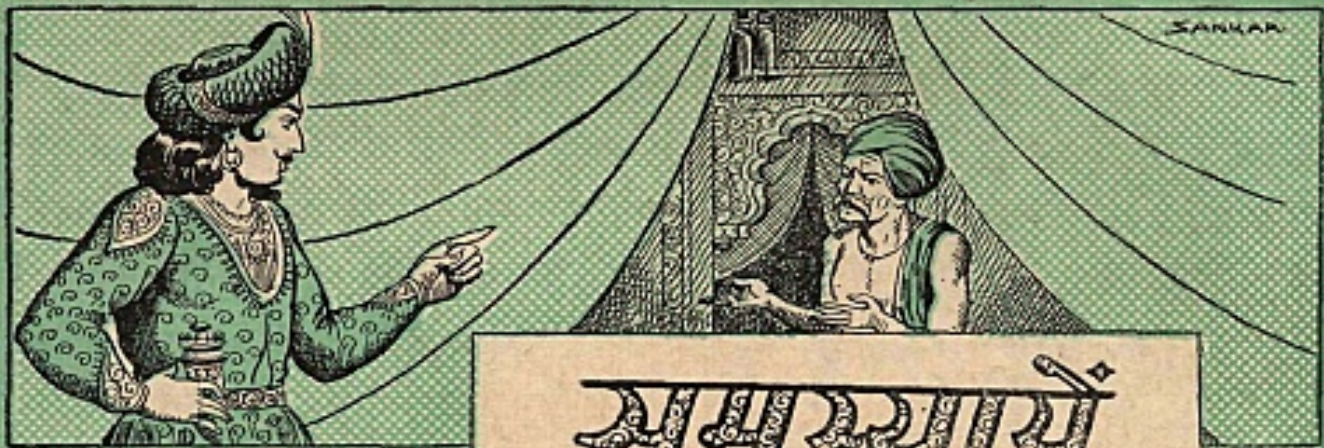
समस्यायें

किसी देश में एक गरीब आदमी रहा करता था। उसके लिये अपना गुज़ारा करना मुश्किल हो रहा था। इसलिये उसने राजा के पास जाकर मदद माँगी। राजा ने कहा—"मैं तुम से चार प्रश्न पूछता हूँ—सब से अधिक तेज़ चलनेवाली चीज़ क्या है? सब से अधिक बलवान क्या वस्तु है? सब से अधिक मुलायम और सब से अधिक आनन्दप्रद चीज़ें क्या हैं? अगर तुमने कल तक इन प्रश्नों का उत्तर बता दिया, तो मैं तुम्हारी सहायता करने का प्रयत्न करूँगा!"

वह गरीब उन प्रश्नों का जवाब सोचता सोचता घर पहुँचा। उसे कोई जवाब न सूझ रहा था। वह घबराने लगा। उसके सोलह वर्ष की एक लड़की थी। उसने व्याकुल पिता को देखकर कहा—"क्यों पिताजी! क्या सोच रहे हो?"

"राजा के पास मदद माँगने गया था। उन्होंने चार प्रश्न पूछे और कल तक जवाब माँगा है। मैं जवाब कैसे बताऊँ?"— पिता ने कहा।

प्रश्नों को सुनकर लड़की ने कहा—"बस! इन्हीं प्रश्नों को लेकर दिमाग़ खराब कर रहे थे पिताजी? सब से अधिक तेज़ हवा है, बलवान भूमि है, क्योंकि बलवान से बलवान प्राणी को भी भूमि ही बल देती है। सब से अधिक मुलायम हाथ है। क्योंकि मुलायम गद्दे पर भी आदमी, हाथ नीचे रखकर सोता है। सब से अधिक आनन्दप्रद निद्रा है।—क्योंकि बड़ा दुःख भी नींद में चला जाता है!"

गरीब को यह जवाब सुनकर बड़ी खुशी हुई। अगले ही दिन जाकर उसने राजा को उसके प्रश्नों का उत्तर बता दिया।

श्री विष्णु कुमार

"ये जवाब क्या तुमने अपने आप स्वयं सोचे हैं? या तुम्हें किसी और ने बताये हैं?" —राजा ने पूछा।

"मेरी सोलह वर्ष की लड़की ने बताये हैं।"—गरीब ने कहा।

राजा को बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने कहा—"तुम्हारी लड़की क्या इतनी अक़्लमन्द है! अच्छा, तो तागे की यह गाँठ ले जाओ और अपनी लड़की को देकर कहो कि कल तक मेरे लिये एक गोटेदार दुपट्टा बुनकर दे दे।" उसने तागे की एक छोटी-सी पोटली गरीब के हाथ में थमा दी।

गरीब हताश हो घर वापिस चला आया। पिता को विह्वल देखकर लड़की ने पूछा—"क्या अभी तक राजा को तुम पर दया नहीं आई है?"

"उसने मुझे एक और समस्या दे दी है। इस तागे से कल तक एक दुपट्टा बुनकर देना है!"—पिता ने कहा।

"पिताजी! इस में कौन सी बड़ी बात है! तुम एक झाड़ू का तिनका लेकर राजा को दो और उनसे कहो कि आज शाम तक उससे एक करघा बनाकर दें। तब मैं गोटेदार दुपट्टा बुनकर दे दूँगी!" —लड़की ने कहा।

गरीब ने झाड़ू का एक तिनका ले जाकर, राजा के सामने अपनी लड़की की बताई हुई बात कही।

राजा ने एक क्षण सोचा, फिर कहा— "तुम्हारी लड़की तो बहुत चालाक मालूम होती है। मैं सौ अंडे देता हूँ। उन्हें सिकवाकर, अपनी लड़की से कहना कि कल तक १०० मुर्गी के बच्चे भेज दें।"

गरीब घबराने लगा कि उस पर कोई आफ़त आनेवाली है। वह सौ अंडों को लेकर घर गया। पर उसकी लड़की को

कोई फ़िक्र न थी, उसने उन अंडों को पकाया, पिता को दबकर खिलाया, और खुद भी खाया। अगले दिन उसने अपने पिता से यों कहा—

"पिताजी! राजा के पास जाकर कहो कि अंडों में से बच्चे निकल आये हैं। परन्तु बच्चे खाना छू तक नहीं रहे हैं। अगर उन्हें एक दिन में तैयार किया हुआ धान न मिला, तो वे शायद कुछ न खाये। इसलिये वह धान दिलाइये। वरना बच्चे मर जायेंगे।" गरीब ने जाकर राजा से कहा। राजा ने कहा—"अपनी लड़की से कहो कि मैं दो मिनिट में तुम्हारे घर आ रहा हूँ!"

यह बात सुनते ही गरीब की लड़की ने सारा घर साफ़-सुथरा किया, गोबर पोता, दरवाज़े की चौखट पर हल्दी लगाई, घर के सामने तोरण भी बाँधा। थोड़ी देर में राजा घोड़े पर चढ़कर आया। उसने घोड़ा रोक तो दिया, पर उस पर से उतरा नहीं। राजा का स्वागत करने के लिये आती हुई लड़की ने एक कदम देहली के बाहर रखा और वह यकायक रुक गई।

घोड़े पर से राजा ने उस लड़की से पूछा—"मैं तुम्हारे घर में आ रहा हूँ? या घोड़े को आगे ले जा रहा हूँ?"

गरीब की लड़की ने मुस्कुराकर कहा—"महाप्रभू! आप मुझ से बड़े हैं, अक़्लमन्द हैं, और अधिक पढ़े-लिखे हैं। अगर आप यह बतायें कि मैं अन्दर जानेवाली हूँ या बाहर, तो मैं आपके प्रश्न का उत्तर दूँगी।"

राजा खुश हुआ। वह घोड़े से उतर आया। उसने मोतियों की एक बड़ी थैली गरीब को दी। बाद में उसने गरीब की लड़की से विवाह कर लिया, और उसको उसने अपनी मुख्य-रानी बनाया।

सूर्य

रात में अगर हम टेलिस्कोप द्वारा आकाश की ओर देखें तो हमें नक्षत्र नहीं, परन्तु कहीं कहीं भी कोहरे के बादल दिखाई देंगे। ये कोई मामूली बादल नहीं हैं। वे हज़ारों सालों से, इसी आकार में चले आ रहे हैं। परन्तु वे वस्तुतः बदलते हैं। कई करोड़ शताब्दियों में ये बादल जमकर एक नक्षत्र बन जाते हैं। हमारा सूर्य भी इसी तरह के बादल का बना हुआ है।

* विचित्र बात तो यह है कि जब वे बादल की अवस्था में होते हैं तो उनमें सिवाय हाइड्रोजन और हीलियम के कुछ नहीं होता। वे भी हमारे वातावरण की हवा से बहुत अधिक हल्की होती हैं। परन्तु इस बादल के समान कोहरे के परिमाण का हम अनुमान भी नहीं कर सकते। अगर उस कोहरे में कहीं हमारी भूमि फँस गई तो उसकी हालत वही होगी, जो समुद्र में रत्ती की होती है।

* उतना ज्यादा कोहरा धीमे धीमे हटने लगता है। ज्यों ज्यों वह घटता जाता है, त्यों त्यों गरमी पैदा होती जाती है। वह घूमने भी लगता है। इस गरमी के कारण हाइड्रोजन और हीलियम का संयोग होता है और उसके परिणाम स्वरूप कई धातु पैदा होती हैं। फिर धातु द्रव रूप में परिवर्तित होती हैं।

* तब कोहरे में एक नक्षत्र ही नहीं, कई ग्रह पैदा हो सकते हैं। द्रवरूप में नक्षत्र की जब गोल आकृति हो जाती है, तो अन्दर से भी अन्य द्रव आकर ऊपर जमा हो जाते हैं।

* सूर्य इस प्रकार के एक कोहरे से बना नक्षत्र है। हो सकता है कि भूमि और नक्षत्र उसी कोहरे में से बने हो, या सूर्य से बाहर निकलकर।

* हवा से भी हल्की कोहरे में से चमकते हुये, अग्निपिण्ड सूर्य का बनना, भूमि और ग्रहों का निर्माण होना, उनके द्वारा भिन्न भिन्न पदार्थों का बन जाना, और उनके आधार पर सकल चरा-चरों का निर्माण होना—यह सब देखकर सचमुच लगता है कि यह ईश्वर की माया है।

रंगीन चित्र-कथा : चित्र - ६

जब घोड़े ने यह कहा कि गम्यस्थान आ गया है, रानी को बेहद सन्तोष हुआ। उसने घोड़े से कहा—"अश्वराज! सिर्फ़ इतने भर से आपका काम खतम नहीं हुआ। मेरे वापिस आने तक आपको यहीं रहना होगा।"

तब पंखोंवाले घोड़े ने कहा—"रानी! यह लाल किला देवलोक से भी दिखाई देता है। यहाँ के मोती, लाल, वगैरह देवताओं को बहुत पसन्द हैं। उनके प्रभाव से मैं यहाँ आता हूँ, और नये नये भेंट, बिना राक्षसी के जाने उनके लिये ले जाता रहता हूँ।" इस पर रानी ने कहा—"कम से कम मेरे लिये कल तक ठहर जाना। मैं आपकी कोई हानि न होने दूँगी।"

रानी अभी यह कह ही रही थी कि इतने में राक्षसी बाहर आयी। उसने घोड़े को देखकर अचरज में रानी से पूछा—"अरे तू कौन है? यहाँ कैसे आयी? क्यों आयी? यह घोड़ा किसका है?"

तब रानी ने धैर्य से कहा—"मैं मन्त्र-तन्त्र जाननेवाली एक स्त्री हूँ। ये एक अश्वरूपी देवता हैं। मैं इन पर चढ़कर देश-विदेश का दौरा कर रही हूँ। रास्ते में मुझे यह सुन्दर लाल किला दिखाई दिया, तो यह सोचकर कि अन्दर भी देख आऊँ, मैं उतरकर आई हूँ।"

राक्षसी ने उसका सम्मान किया, और किले के अन्दर ले गई। उसकी बड़ी आवभगत की। आखिर अपनी बेअक्ल लड़की को दिखाकर उसने कहा—"इसकी शादी करने के लिये मैं एक खूबसूरत राजकुमार को पकड़ लाई हूँ। मैंने उसका सिर गधे के सिर में बदल दिया है। परन्तु मेरी शत्रु एक अप्सरा ने उसको शाप-विमुक्त करने के लिये यह बताया कि अगर उसको प्रेम करनेवाली पत्नी मिल गई, तो उसका अपना सिर फिर आ जायेगा। मेरी लड़की उससे तो प्यार करती है, पर वह उसको बिल्कुल नहीं चाहता। क्या तू अपने मन्त्र से मेरी लड़की के लिये उसको मना सकेगी?"

"हाँ, इसमें क्या रखा है!"—रानी ने कहा। कहते-कहते............!

फोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

जुलाई १९५५ :: पारितोषिक १०)

कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें।

ऊपर के फोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए। परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिख कर निम्नलिखित पते पर भेजनी चाहिये।

फोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन
वडपलनी :: मद्रास - २६

मई - प्रतियोगिता - फल

मई के फोटो के लिये निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं।
इनके प्रेषिका को १० रु. का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फोटो : "**कहो कैसे लगता हूँ?**" दूसरा फोटो : "**हा! हा!! बिलकुल मसखरे!**"

श्री. कमला, द्वारा : श्री कर्तार सिंह, एम्प्लाइमेंट एक्चेंज, **अमृतसर (पंजाब)**

बिचारा बैंगन !

एक नवाब था। उस नवाब को देखने के लिये रोज़ बड़े बड़े लोग आया करते थे। जो कोई देखने आता, नवाब को नज़राना देता। नज़राना देना ज़रूरी था। नज़राना के रूप में नवाब के पास कई चीज़ें आया करती थीं।

एक दिन नवाब के पास कोई बङ्गाल से एक सब्जी भेंट में लाया। उस बङ्गाल की सब्जी को, खूब मसाला-तेल लगाकर पकाया। नवाब ने उस सब्जी को खाकर कहा—'बहुत अच्छा है!' बैंगन के बारे में नवाब साहब खूब बढ़ा-चढ़ाकर कहने लगे।

नवाब को बैंगन के बारे में और जानने का कुतूहल हुआ। मन्त्री को बुलाकर नवाब साहब ने एक बैंगन मँगाने के लिये कहा। मन्त्री ने बैंगन मँगा कर दिया। नवाब ने बैंगन को देखकर सन्तोष से कहा—'अल्लाह ने इसमें क्या स्वाद दिया है! इससे बढ़कर संसार में क्या कोई अच्छी सब्जी है?'

'नहीं, हुज़ूर! यही सब सब्जियों का राजा है। इसी कारण इसके सिर पर अल्लाह ने ताज रखा है!'—मन्त्री ने कहा।

मन्त्री ने अभी यह बात कही ही थी कि नवाब के हाथ में, बैंगन पर लगा एक छोटा-सा काँटा चुभा।

नवाब तिलमिलाते हुआ उठा, जैसे बिच्छू ने काट लिया हो। बैंगन दूर फेंकते हुए कहा—'अरे! यह फ़ालतू बैंगन क्या सब्जियों का राजा है? देखो! इसका काँटा मेरे हाथ में कैसे चुभ गया है!'

'हाँ, हुज़ूर! यह बिलकुल फ़ालतू सब्जी है। इसी कारण इसके सिर पर एक टोप लगाकर अल्लाह ने कील ठोंक रखी है। चाहे तो आप खुद देख लीजिये। खींचने पर भी यह कील बाहर नहीं निकलेगी!'—कहते हुए मन्त्री ने नवाब के सामने बैंगन का डंठल खींचकर दिखाया।

'अच्छा तो वज़ीर! इस फ़ालतू सब्जी को हमारे रियासत में किसी को न पकाने दो!'—नवाब ने हुक्म दिया।

समाचार वगैरह

विश्वविद्यालयों में मातृभाषा के माध्यम शिक्षा देने का बहुत दिनों से प्रयत्न किया जा रहा है। अब इस दिशा में कुछ सफलता दृष्टिगोचर हो रही है।

उत्तर भारतीय विश्वविद्यालयों में हिन्दी के माध्यम सम्प्रति भी शिक्षा दी जा रही है। अब मद्रास में भी, जहाँ अंग्रेजी का बोलबाला रहा है, विज्ञान सम्बन्धी विषयों को छोड़कर, और सब विषय मातृभाषा में ही पढ़ाये जायेंगे।

* * *

आन्ध्र में नई सरकार स्थापित हो गई है। इस प्रान्त में अब राजनैतिक अस्थिरता नहीं है। त्रावनकोर-कोचिन में, जहाँ दुबारा निर्वाचन हुये थे, राजनैतिक अस्थिरता की समस्या हल न हुई थी। परंतु आन्ध्र में निर्वाचन का परिणाम एकदम अप्रत्याशित रहा। आन्ध्र साम्यवादियों का अड्डा समझा जाता था। परन्तु निर्वाचन में साम्यवादी बुरी तरह पराजित हुये।

* * *

अब ग्रीष्मावकाश के दिन हैं। विद्यार्थियों के लिये रेलवेस ने नयी रियायतें घोषित की हैं। ये रियायतें अध्यापकों को भी प्राप्य हैं। हिल-स्टेशन

आने-जाने के लिये भी विशेष रियायतें दी जा रही हैं।

*　　*　　*

हाल ही में प्रसिद्ध अन्धी विदुषी हेलन केलर ने भारत का पर्यटन किया। वे न देख सकती हैं, न सुन ही सकती हैं। बोलने में भी बड़ी तकलीफ़ होती है। वे हाथ पर किये गये इशारों से सब कुछ समझ लेती हैं। वे भारतीय सरकार की अतिथि थीं। उन्होंने भारत में अन्धों और गूँगों की संस्थाओं, व शिक्षणालयों का अध्ययन किया।

*　　*　　*

आन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में फ़ारमोसा को लेकर कुछ दिनों तक तनातनी बढ़ी। परंतु यह प्रकट है कि कोई भी देश युद्ध के लिये तैयार नहीं है। इस बीच में, प्रसिद्ध माल्टा समझौते के बारे में कुछ गुप्त कागज़ात प्रकाशित किये गये हैं, जिनसे आशंका की जाती है कि ब्रिटेन और अमेरिका के आपसी सम्बन्ध में कुछ मनमुटाव आ जाय।

*　　*　　*

महाराज त्रिभुवन की मृत्यु के बाद नेपाल में अब नये राजा गद्दी पर बैठे हैं। इनका नाम महेन्द्र वीर विक्रम शाह देव है। इनकी उम्र चौंतीस की है। इनके पूर्वज १६ वीं सदी से नेपाल पर राज करते आये हैं। वहाँ हाल ही में प्रजा-तंत्रात्मक शासन पद्धति प्रसिद्ध की गई थी। नेपाल को भारत से कई प्रकार की मदद मिल रही है।

*　　*　　*

श्री जवाहरलाल नेहरू की पुत्री श्रीमती इन्दिरा गाँधी अब काँग्रेस की कार्यकारिणी समिति में ले ली गई हैं। वे सामाजिक कार्य के साथ साथ बच्चों के कल्याण के लिये भी कार्यरत रहती आई हैं। इस सम्बन्ध में उनका अनुभव विशेष उपयोगी होगा।

चित्र - कथा
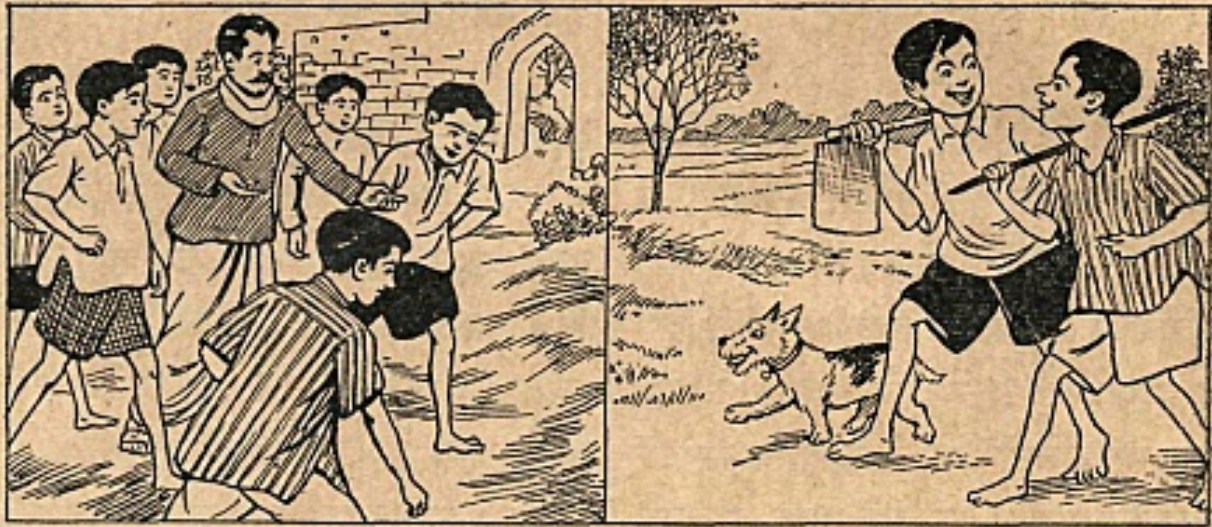
एक दिन दास, वास, और कुछ विद्यार्थियों को उनके अध्यापक शहर के बाहरवाले किले के खँड़हर के पास ले गये। उन्होंने बताया कि कभी किले में राजवंश के लोग रहते थे; इसलिये अब भी वहाँ अगर खोदा जाय, तो ताम्र शासन पत्र, चाँदी और सोना मिल सकता है। दास और वास ने अध्यापक की बात बड़े गौर से सुनी।

अगले दिन दास और वास फावड़ा लेकर वहाँ जा पहुँचे। 'टाइगर' भी साथ था। वे खोद-खाद कर सोना-चान्दी पाना चाहते थे। पर उनकी मेहनत का फल सिर्फ़ इतना ही हुआ की "टाइगर" को एक हड्डी मिल गई।

Printed by B. NAGI REDDI at the B. N. K. Press Ltd., Madras 26, and Published by him for Chandamama Publications, Madras 26. Controlling Editor: SRI 'CHAKRAPANI'

Photo by B. Bhansali

पुरस्कृत परिचयोक्ति

हा ! हा !! बिलकुल मसखरे !

प्रेषिका
श्री. कमला, अमृतसर

रङ्गीन चित्र-कथा, चित्र – ६